राजस्थान उच्च न्यायालय जोधपुर पीठ

एकलपीठ सिविल आपराधिक विविध (याचिका) संख्या 3716/2022

श्रवण सिंह पुत्र स्व. उमेद सिंह, उम्र लगभग 36 वर्ष, पुत्र राजपूत, निवासी बयाला, तह. सरदारशहर, जिला. चूरू (राजस्थान).

भंवरी कंवर पत्नी स्व. उमेद सिंह, उम्र लगभग 64 वर्ष, बी/सी राजपूत, निवासी बयाला, तह. सरदारशहर, जिला. चूरू (राजस्थान).

----अपीलार्थी

बनाम

राजस्थान राज्य, पी.पी. के माध्यम से

एमएसटी. सुमेर कंवर पत्नी स्व. पूरन सिंह, डी/ओ लेफ्टिनेंट श्री करण सिंह, निवासी क्वार्टर संख्या 76 जी, सिविल लाइन्स, श्री गंगानगर (राजस्थान)।

----प्रत्यर्थी

अपीलार्थी की ओर से	:	श्री प्रदीप कुमार शाह
प्रत्यर्थी की ओर से	:	श्री एआर चौधरी, पी.पी.
		श्री आर.एस. चौधरी

माननीय न्यायमूर्ति पुष्पेंद्र सिंह भाटी

निर्णय

रिपोर्टेबल

06/01/2023

1. यह आपराधिक विविध. सीआरपीसी की धारा 482 के तहत याचिका निम्नलिखित राहतों का दावा करने को प्राथमिकता दी गई है:-

> *"अत:, यह अत्यंत सम्मानपूर्वक प्रार्थना की जाती है कि यह आपराधिक विविध। याचिका को कृपया स्वीकार किया जाए और विद्वान मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, श्री गंगानगर द्वारा दिनांक 06.04.2017 को पारित*

आदेश, अपराधों का संज्ञान लेते हुए, साथ ही विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश संख्या 1, श्री गंगानगर द्वारा पारित आदेश दिनांक 31.03.2022 को भी स्वीकार किया जाए। अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुत पुनरीक्षण याचिका को खारिज करते हुए दिनांकित आदेश की पुष्टि की 06.04.2017 को विद्वान मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, श्री गंगानगर द्वारा पारित किया गया, रद्द कर दिया गया और कोई अन्य उचित आदेश या निर्देश, जिसे यह माननीय न्यायालय उचित और उचित समझता है, अपीलार्थियों को दिया जा सकता है।"

2. जैसा कि दलील दिए गए तथ्यों और रिकॉर्ड से पता चलता है, शिकायतकर्ता-प्रत्यर्थी संख्या 2-सुमेर कंवर पुत्री करण सिंह द्वारा एक शिकायत दर्ज की गई थी, जिसमें कहा गया था कि उसने 11.05.2005 को हिंदू रीति-रिवाजों के अनुसार पूरन सिंह से शादी की थी। और श्री गंगानगर में अनुष्ठान। और, 24.05.2013 को, पूरण सिंह ने सुमन कंवर पुत्री उम्मेद सिंह से शादी की, जबकि उनकी पहली शादी शिकायतकर्ता-प्रत्यर्थी संख्या के साथ थी।

2.1 दिनांक 27.09.2013 को शिकायतकर्ता-प्रत्यर्थी क्रमांक 2-श्री सुमेर कंवर ने दर्ज कराई एफ.आई.आर. आठ आरोपी व्यक्तियों के खिलाफ पुलिस स्टेशन-महिला थाना, श्री गंगानगर में संख्या 288/2013; पूरण सिंह, सजना कंवर, सुजन कंवर, मिठू कंवर, कांता कंवर, मनफूल सिंह, प्रभु सिंह और सुमन कंवर को धारा 420, 406, 498 क और 494 आईपीसी के तहत अपराध के लिए; जांच के बाद, उपरोक्त आठ आरोपियों में से तीन के खिलाफ 03.02.2014 को आरोप-पत्र दायर किया गया; पूरन सिंह, नरपत सिंह और साजन कंवर को आईपीसी की धारा 419, 420, 406, 498-क, 494, 171 और 120ख के तहत अपराध के लिए दोषी ठहराया गया है।

2.2 एवं दिनांक 23.09.2016 को शिकायतकर्ता-प्रत्यर्थी क्र. 2 ने विद्वान मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, श्री गंगानगर के समक्ष एक निजी शिकायत दर्ज की; जिसके बाद निचली अदालत ने वर्तमान अपीलार्थियों, अपीलार्थी संख्या के खिलाफ संज्ञान लेने की कार्रवाई की। 1-श्रवण सिंह (दूसरी पत्नी-सुमन कंवर पुत्री उम्मेद सिंह का भाई) और अपीलार्थी नं. 2-भंवरी कंवर (दूसरी पत्नी की मां), और

ग्यारह अन्य व्यक्तियों को दिनांक 06.04.2017 के आक्षेपित आदेश के तहत आईपीसी की धारा 109 और 114 के साथ पढ़ी जाने वाली धारा 494 के तहत अपराध के लिए दोषी ठहराया गया।

2.3 यह कि उपरोक्त आदेश के खिलाफ विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश संख्या 1, श्री गंगानगर के समक्ष एक पुनरीक्षण याचिका दायर की गई थी, जिसे दिनांक 31.03.2022 के आक्षेपित आदेश के तहत खारिज कर दिया गया।

3. अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता का कहना है कि प्रश्न में कथित अपराध में वर्तमान अपीलार्थियों को कोई विशिष्ट भूमिका नहीं दी गई है, और अत:, नीचे दिए गए विद्वान न्यायालयों ने विवादित आदेश पारित करने में गलती की है।

4. अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने आगे कहा कि आक्षेपित एफ.आई.आर. लगभग 4 महीने की देरी के बाद दर्ज किया गया था और उक्त एफ.आई.आर. में, वर्तमान अपीलार्थियों-श्रवण सिंह और भंवरी सिंह का नाम नहीं था। यहां तक कि संबंधित पुलिस अधिकारियों द्वारा बाद में दायर की गई चार्जशीट में भी वर्तमान अपीलार्थियों को आरोपी के रूप में सूचीबद्ध नहीं किया गया था।

5. अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता का यह भी कहना है कि आरोप-पत्र दाखिल होने के बाद ही शिकायतकर्ता-प्रत्यर्थी सं. 2 ने वर्तमान अपीलार्थियों को झूठा फंसाने के इरादे से, प्रश्नगत अपराधों के लिए उनके खिलाफ एक निजी शिकायत दर्ज कराई।

6. अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने आगे कहा कि निचली निचली अदालत ने कथित अपराध में वर्तमान अपीलार्थियों की ओर से किसी भी संलिप्तता का सुझाव देने के लिए साक्ष्यों की कमी के बावजूद, बिना सोचे-समझे वर्तमान अपीलार्थियों के खिलाफ संज्ञान लेने की कार्रवाई की। प्रश्न में। और इस प्रकार पसंदीदा पुनरीक्षण याचिका को भी मामले के उक्त प्रासंगिक पहलू की सराहना किए बिना सरसरी तौर पर खारिज कर दिया गया।

7. विद्वान अधिवक्ता ने आगे कहा कि यह न्यायालय सीआरपीसी की धारा 482 के तहत अपने क्षेत्राधिकार का प्रयोग कर सकता है। संज्ञान के आदेश के खिलाफ, और **मधु लिमये बनाम महाराष्ट्र राज्य 1978 एससीआर (1) 749** के

मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय पर भरोसा किया।

उक्त निर्णय का प्रासंगिक भाग यहां निम्नानुसार पुन: प्रस्तुत किया गया है:-

"यह मानते हुए भी, हालांकि हम वर्तमान में दिखाएंगे कि ऐसा नहीं है, कि ऐसे मामले में न्यायालय का संज्ञान लेने या प्रक्रिया जारी करने का आदेश एक अंतरिम आदेश है, क्या यह कहना तर्कसंगत है कि उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति नहीं हो सकती है अभियुक्त को अंत तक परेशान करने के बजाय आपराधिक कार्यवाही को यथाशीघ्र रोकने का प्रयास किया जाना चाहिए? उत्तर स्पष्ट है कि बार न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने और/या न्याय के उद्देश्य को सुरक्षित करने के लिए काम नहीं करेगा। किसी पीड़ित पक्ष द्वारा दायर याचिका का लेबल महत्वहीन है। उच्च न्यायालय अपनी अंतर्निहित शक्तियों के तहत उचित मामले में मामले की जांच कर सकता है। वर्तमान मामला निस्संदेह 1973 संहिता की धारा 482 के अनुसार उच्च न्यायालय की शक्ति के प्रयोग के अंतर्गत आता है, यहां तक कि यह मानते हुए भी कि उच्च न्यायालय की पुनरीक्षण शक्ति को लागू करना अस्वीकार्य है।

8. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता और विद्वान लोक अभियोजक वर्तमान याचिका का विरोध करते हैं और प्रस्तुत करते हैं कि विवाद के समग्र तथ्यों और परिस्थितियों पर उचित विचार करने के बाद, नीचे के विद्वान न्यायालयों द्वारा आक्षेपित आदेश सही ढंग से पारित किए गए हैं। वर्तमान मामला, और यह कि वर्तमान अपीलार्थी इस न्यायालय की कृपा के पात्र नहीं हैं, विशेषकर संज्ञान के चरण में।

9. प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने भी दलीलें दीं और उन्हें निम्नलिखित तरीके से केस-कानूनों के साथ मजबूत किया:-

9.1 कि वर्तमान याचिका सीआरपीसी की धारा 397 के तहत पुनरीक्षण याचिका के रूप में सुनवाई योग्य नहीं है और धारा 482 सीआरपीसी के तहत अपने

अधिकार क्षेत्र में इस न्यायालय के समक्ष प्राथमिकता दी गई है। और सरसरी तौर पर खारिज कर दिया जाना चाहिए। इस संबंध में कृष्णन और अन्य के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय पर भरोसा किया गया था। **वी. कृष्णावेणी और अन्य (सिविल अपील क्रमांक 58/1997 का निर्णय 24.01.1997 को हुआ)**।

जैसा कि उस पर भरोसा किया गया था, उसका प्रासंगिक भाग यहां निम्नानुसार पुन: प्रस्तुत किया गया है:-

"8. धारा 483 का उद्देश्य और उच्च न्यायालय को धारा 401 के साथ पठित धारा 397 के तहत पुनरीक्षण शक्ति प्रदान करने के पीछे का उद्देश्य निरंतर पर्यवेक्षी क्षेत्राधिकार का निवेश करना है ताकि न्याय के गर्भपात को रोका जा सके या प्रक्रिया की अनियमितता को ठीक किया जा सके या न्याय पूरा किया जा सके। इसके अलावा, उच्च न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति धारा 482 द्वारा संरक्षित है। अत:, उच्च न्यायालय की शक्ति बहुत व्यापक है। हालाँकि, जब सत्र न्यायाधीश ने धारा 397(1) के तहत एक साथ पुनरीक्षण शक्ति का प्रयोग किया हो, तो उच्च न्यायालय को ऐसी शक्ति का प्रयोग संयमपूर्वक और सावधानी से करना चाहिए। हालाँकि, जब उच्च न्यायालय को पता चलता है कि न्याय की विफलता हुई है या न्यायिक तंत्र या प्रक्रिया का दुरुपयोग हुआ है, सजा या आदेश सही नहीं है, तो प्रक्रिया के दुरुपयोग या न्याय के गर्भपात को रोकना उच्च न्यायालय का हितकर कर्तव्य है। या अवर आपराधिक न्यायालय द्वारा अपनी न्यायिक प्रक्रिया में की गई अनियमितताओं/गलतियों या सजा या आदेश की अवैधता को ठीक करने के लिए।

10. आमतौर पर, जब संहिता की धारा 397(3) द्वारा पुनरीक्षण पर रोक लगा दी गई है, तो किसी व्यक्ति-आरोपी/शिकायतकर्ता-को धारा 397(1) के तहत या अंतर्निहित शक्तियों के तहत उच्च न्यायालय में पुनरीक्षण का सहारा लेने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। उच्च न्यायालय को संहिता की धारा 482 के तहत, क्योंकि यह संहिता की धारा 397(3) या धारा 397(2) के प्रावधानों का

उल्लंघन हो सकता है। यह देखा गया है कि उच्च न्यायालय के पास धारा 401 के तहत स्वत: संज्ञान लेने की शक्ति है और संहिता की धारा 483 के तहत निरंतर पर्यवेक्षी क्षेत्राधिकार है। अत:, जब रिकॉर्ड की जांच करने पर उच्च न्यायालय को पता चलता है कि न्याय का गंभीर दुरुपयोग हुआ है या अदालतों की प्रक्रिया का दुरुपयोग हुआ है या आवश्यक वैधानिक प्रक्रिया का अनुपालन नहीं किया गया है या न्याय की विफलता है या पारित आदेश या सजा सुनाई गई है। मजिस्ट्रेट को सुधार की आवश्यकता है, लेकिन यह उच्च न्यायालय का कर्तव्य है कि वह शुरुआत में ही इसे ठीक कर दे, अन्यथा न्याय का गंभीर गर्भपात हो जाएगा। अत:, न्याय के उद्देश्यों को पूरा करने या प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने के लिए उच्च न्यायालय को अंतर्निहित शक्ति के साथ संरक्षित किया जाता है और ऐसी परिस्थितियों में, अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग करना उचित होगा और एक उचित मामले में यहां तक कि पुनरीक्षण शक्ति के तहत भी। धारा 397(1) संहिता की धारा 401 के साथ पठित। जैसा कि पहले कहा गया है, इसका प्रयोग संयमित ढंग से किया जाना चाहिए ताकि प्रक्रिया की अनावश्यक बहुलता, मुकदमे में अनावश्यक देरी और कार्यवाही को लंबा खींचने से बचा जा सके। आपराधिक मुकदमे का उद्देश्य सार्वजनिक न्याय प्रदान करना, अपराधी को दंडित करना और यह सुनिश्चित करना है कि गवाह की याददाश्त खत्म होने से पहले मुकदमा शीघ्र समाप्त हो जाए। हालिया प्रवृत्ति मुकदमे में देरी करना और गवाह को धमकाना या वादे या प्रलोभन से गवाह को जीतना है। इन कदाचारों पर अंकुश लगाने की जरूरत है और सार्वजनिक न्याय तभी सुनिश्चित किया जा सकता है जब मुकदमा तेजी से चलाया जाए।"

9.2 कि एफआईआर/शिकायत में लगाए गए आरोपों की सत्यता पर संज्ञान के चरण में विचार नहीं किया जा सकता है। इस संबंध में **के. नीलावेनी बनाम राज्य प्रतिनिधि, पुलिस निरीक्षक एवं अन्य** के मामले में माननीय शीर्ष न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय पर भरोसा किया गया था। **(आपराधिक अपील क्रमांक 574/2010 पर निर्णय 22.03.2010 को हुआ)**।

जैसा कि उस पर भरोसा किया गया था, उसका प्रासंगिक भाग यहां निम्नानुसार पुन: प्रस्तुत किया गया है:-

"8. हमने प्रस्तुत प्रस्तुतियों पर विचारपूर्वक विचार किया है और हम अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री गुरु कृष्ण कुमार की प्रस्तुति को स्वीकार करने के इच्छुक हैं। प्रथम सूचना रिपोर्ट में लगाए गए आरोपों के अवलोकन से, यह स्पष्ट है कि अपीलार्थी ने स्पष्ट रूप से आरोप लगाया है कि उसके पति ने भारती नाम की एक अन्य महिला से शादी की थी और उक्त शादी अन्य आरोपी व्यक्तियों की उपस्थिति में और उनके समर्थन से हुई थी। उन्होंने यह भी कहा था कि भारती के साथ दूसरी शादी से एक बेटी का जन्म हुआ। प्रथम सूचना रिपोर्ट में, यह स्पष्ट रूप से आरोप लगाया गया था कि सोने के आभूषणों के अलावा अन्य घरेलू सामान शादी में दिए गए थे और इसके अलावा आरोपी व्यक्तियों द्वारा उसके साथ क्रूरता की गई और वैवाहिक घर से बाहर निकाल दिया गया। हमारी राय में, इस स्तर पर प्रथम सूचना रिपोर्ट में लगाए गए आरोपों को सच माना जाना चाहिए, और लगाए गए आरोप प्रथम दृष्टया भारतीय दंड संहिता की धारा 406 और 494 के तहत अपराध बनते हैं। यह ध्यान में रखना होगा कि आरोप-पत्र को रद्द करने के आवेदन पर विचार करते समय, प्रथम सूचना रिपोर्ट में लगाए गए आरोपों और जांच के दौरान एकत्र की गई सामग्रियों पर विचार करना आवश्यक है। आरोप की सत्यता या अन्यथा इस स्तर पर चर्चा करना उचित नहीं है क्योंकि यह हमेशा परीक्षण का विषय है। विवाह के आवश्यक समारोहों का पालन किया गया या नहीं, यह परीक्षण का विषय है।

9.3 कि संज्ञान के चरण में, बचाव पक्ष के संस्करण पर विचार नहीं किया जाना चाहिए। इस संबंध में सोनू गुप्ता बनाम दीपक गुप्ता और अन्य के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय पर भरोसा किया गया था। **(आपराधिक अपील संख्या 285- 287/2015 का निर्णय 11.02.2015 को हुआ)** और **प्रेम बहादुर बनाम राजस्थान राज्य और अन्य** के मामले में इस माननीय न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा दिए गए निर्णय पर। **(एस.बी. आपराधिक विविध याचिका संख्या 1352, 1243/2005 दिनांक 27.11.2013 को निर्णय लिया गया)**।

जैसा कि उस पर भरोसा किया गया था, उसका प्रासंगिक भाग यहां निम्नानुसार पुन: प्रस्तुत किया गया है: -

सोनू गुप्ता (सुप्रा.) में:-

"7. शिकायत याचिका में लगाए गए आरोपों के विवरण पर विचार करने के बाद, शिकायतकर्ता के बयान के साथ-साथ उन सामग्रियों पर भी अपीलार्थी ने भरोसा किया, जो विद्वान मजिस्ट्रेट द्वारा मांगे गए थे, विद्वान मजिस्ट्रेट ने हमारी सुविचारित राय में कोई गलती नहीं की। अभियुक्तों को तलब करने में त्रुटि।

संज्ञान और सम्मन के चरण में मजिस्ट्रेट को केवल अपराध का संज्ञान लेने के लिए, या दूसरे शब्दों में, यह पता लगाने के लिए अपने न्यायिक दिमाग का उपयोग करने की आवश्यकता होती है कि क्या आरोपी व्यक्तियों को बुलाने के लिए प्रथम दृष्टया मामला बनाया गया है। इस स्तर पर, विद्वान मजिस्ट्रेट को बचाव पक्ष के संस्करण या सामग्रियों या तर्कों पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है और न ही उसे शिकायतकर्ता की सामग्रियों या साक्ष्यों के गुणों का मूल्यांकन करने की आवश्यकता है, क्योंकि मजिस्ट्रेट को इस स्तर पर पता लगाने का कार्य नहीं करना चाहिए। क्या सामग्री से दोषसिद्धि होगी या नहीं।"

प्रेम बहादुर (सुप्रा.) में:-

"13. अपीलार्थी प्रेम बहादुर का तर्क यह है कि वह शादी के समय उपस्थित नहीं थे क्योंकि वह छुट्टी पर थे और रोज़नामचा को भी उनके अन्यत्र बचाव के समर्थन में रिकॉर्ड में रखा गया है। संज्ञान लेते समय बचाव पक्ष के कथन पर गौर नहीं किया जा सकता, अत: इस स्तर पर यह याचिका अनुचित है।"

10. दोनों पक्षों के विद्वान वकीलों को सुना और साथ ही मामले के रिकॉर्ड का अवलोकन किया।

11. शुरुआत में, यह न्यायालय, यह देखते हुए कि प्रत्यर्थियों की ओर से उद्धृत मामले के कानून उनके मामले में कोई सहायता प्रदान नहीं करते हैं, उस संबंध

में निम्नलिखित टिप्पणियां करता है:-

11.1 **कृष्णन और अन्य(सुप्रा.),** के मामले में। माननीय उच्चतम न्यायालय ने माना है कि जब उच्च न्यायालय को पता चलता है कि न्याय में विफलता हुई है, तो न्याय के गर्भपात को रोकना उच्च न्यायालय का हितकर कर्तव्य है, और यही कारण है कि उच्च न्यायालय को अंतर्निहित शक्तियाँ प्राप्त हैं।

11.2 **माननीय** उच्चतम न्यायालय **ने के. नीलावेणी (सुप्रा.)** के मामले में माना कि यदि प्रथम दृष्टया मामला बनता है तो एफआईआर में लगाए गए आरोपों को सच माना जाना चाहिए, और सत्यता का निर्धारण समय पर किया जाएगा। परीक्षण। इसी तरह, **सोनू गुप्ता (सुप्रा.)** के मामले में इस माननीय न्यायालय की एक समन्वय पीठ ने कहा कि संज्ञान के चरण में, न्यायिक मजिस्ट्रेट को आरोपी को बुलाने में केवल यह देखना होता है कि प्रथम दृष्टया मामला बनता है या नहीं।

11.3 **प्रेम बहादुर (सुप्रा.)** का मामला वर्तमान मामले के तथ्यात्मक मैट्रिक्स से अलग है, क्योंकि इसमें अपीलार्थी स्वयं आरोपी-पति था।

12. वर्तमान मामले के तथ्यात्मक मैट्रिक्स में जाने से पहले, यह न्यायालय विचाराधीन मुद्दे पर मौजूदा न्यायशास्त्र का विश्लेषण करना उचित समझता है।

12.1 **चंद धवन (श्रीमती) बनाम जवाहर लाल (आपराधिक अपील संख्या 269/1992)** में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा 28.04.1992 को निर्णय दिया गया, यह इस प्रकार देखा गया है:-

> *"9. अतः, हमारा विचार है कि उच्च न्यायालय ने इस निष्कर्ष पर पहुंचने में स्पष्ट रूप से गलती की है कि कार्यवाही रद्द की जा सकती है। शिकायत में लगाए गए आरोपों और उन आरोपों के समर्थन में प्रस्तुत सामग्री के आलोक में मजिस्ट्रेट के समक्ष अपीलार्थी द्वारा, प्रत्यर्थी क्रमांक 1 और 2 को प्रक्रिया जारी करना, जिन पर अपीलार्थी के पहले वैध विवाह के अस्तित्व के दौरान दूसरी शादी करने का आरोप है, उचित है और जब प्रक्रिया जारी की गई है, इन प्रत्यर्थियों संख्या 1 और 2 के खिलाफ कानून के अनुसार कार्यवाही जारी रखनी होगी। जहां तक अन्य*

प्रत्यर्थियों का प्रश्न है, यह कहा जा सकता है कि उन्हें अनावश्यक रूप से और परेशान करने वाले तरीके से फंसाया गया है। शिकायत में आरोप अब तक इन प्रत्यर्थियों पर हैं संबंधित अस्पष्ट हैं। यह नहीं माना जा सकता है कि उन्होंने अपनी उपस्थिति से या अन्यथा इस जानकारी के साथ दूसरी शादी की अनुमति दी थी कि पिछली शादी अस्तित्व में थी। पहले प्रत्यर्थी का यह स्पष्टीकरण कि दूसरा प्रत्यर्थी अपने बच्चों को छोड़ने वाली मां की अनुपस्थिति में उनकी देखभाल के लिए एक गवर्नेस के रूप में कार्य कर रहा है, इसका तात्पर्य यह है कि उत्तरदाता संख्या 1 और 2 एक साथ रह रहे हैं। इस पृष्ठभूमि में, प्रत्यर्थियों 3 से 7 के खिलाफ लगाए गए आरोपों में उन पर अन्य सामग्री द्वारा समर्थित दोषी ज्ञान का आरोप लगाना उन प्रत्यर्थियों के खिलाफ कार्यवाही जारी रखने को उचित नहीं ठहराएगा।

10. हमारे विचार में, विद्वान मजिस्ट्रेट के समक्ष शिकायत केवल प्रत्यर्थियों संख्या 1 और 2 के विरुद्ध ही आगे बढ़ाई जानी चाहिए।

11. तदनुसार, जहां तक प्रत्यर्थियों संख्या 1 और 2 का संबंध है, हम अपील को उस सीमा तक स्वीकार करते हैं, जहां तक प्रत्यर्थी संख्या 1 और 2 का संबंध है और इन दोनों प्रत्यर्थियों के खिलाफ शिकायत को आगे बढ़ाने और कानून के अनुसार निपटाने के लिए शिकायत को बहाल करते हैं।"

12.2 कन्नन बनाम सेल्वमुथुकानी (आपराधिक अपील संख्या 234-35/2012) में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा 30.01.2012 को निर्णय दिया गया, यह इस प्रकार देखा गया है:-

"3. उन तथ्यों को बताना आवश्यक है जिनके कारण ये अपीलें हुईं। प्रत्यर्थी-सेल्वमुथुकानी @ सेल्वमुथु मूल शिकायतकर्ता (संक्षेप में 'शिकायतकर्ता') हैं। उन्होंने न्यायिक मजिस्ट्रेट संख्या 1 की अदालत में एक निजी शिकायत दर्ज की, कोयंबटूर में कन्नन (मूल आरोपी 1-संक्षेप में 'ए1'), एम. रंगन चेट्टियार (मूल आरोपी 2-संक्षेप में 'ए2'), मुरुगयी

(मूल आरोपी 3-संक्षेप में 'ए3') के खिलाफ 1992 का सीसी संख्या 620 है। के. पलानियाम्मल (मूल आरोपी 4-संक्षेप में 'ए4'), गणेशन (मूल आरोपी 5-संक्षेप में 'ए5') और सात अन्य। शिकायतकर्ता ने आरोप लगाया कि उसकी शादी 16.6.1980 को ए1 से हुई थी। उसके अनुसार, ए1 के साथ अपने विवाह के निर्वाह के दौरान, ए1 ने ए4 से विवाह किया और इस प्रकार भारतीय दंड संहिता (संक्षेप में 'भारतीय दंड संहिता') की धारा 494 के तहत दंडनीय अपराध किया। शिकायतकर्ता ने आगे आरोप लगाया कि सक्रिय रूप से सहायता करने और उसमें भाग लेने से विवाह समारोह में, अन्य अभियुक्तों ने उक्त अपराध को अंजाम देने के लिए उकसाया और इस प्रकार वे भारतीय दंड संहिता की धारा 109 के साथ पठित धारा 494 के तहत दंडनीय अपराध के दोषी हैं। शिकायतकर्ता की शिकायत और बयान पर गौर करने के बाद, विद्वान मजिस्ट्रेट ने ए1 के खिलाफ भारतीय दंड संहिता की धारा 494 के तहत और ए2 से ए5 के खिलाफ भारतीय दंड संहिता की धारा 109 के साथ पढ़ी जाने वाली धारा 494 के तहत आरोप तय किया। शिकायतकर्ता ने खुद को पीडब्लू-1 के रूप में जांचा। उसने दो और गवाहों (पीडब्लू-2 और पीडब्लू-3) से भी पूछताछ की। आरोपियों ने अपने मामले (डीडब्ल्यू-1 और डीडब्ल्यू-2) के समर्थन में दो गवाहों से पूछताछ की। रिकॉर्ड पर मौजूद साक्ष्यों का अवलोकन करने के बाद, विद्वान मजिस्ट्रेट ने ए1 को भारतीय दंड संहिता की धारा 494 के तहत दंडनीय अपराध का दोषी ठहराया। उन्होंने ए2 से ए5 को भारतीय दंड संहिता की धारा 109 के साथ पढ़ी जाने वाली धारा 494 के तहत दंडनीय अपराध का दोषी ठहराया। उन्होंने सभी आरोपियों को दो-दो वर्ष के कठोर कारावास और पांच-पांच हजार रुपये जुर्माने की सजा सुनाई। 1,000/- प्रत्येक। अन्यथा की स्थिति में अभियुक्तों को एक माह का कठोर कारावास भुगतना पड़ा।

9. अभियोजन पक्ष ने स्पष्ट रूप से स्थापित किया है कि ए1 का विवाह शिकायतकर्ता से 16.6.1980 को हुआ था। यह भी एक तथ्य है कि ए1 ने 20.2.1991 को विवाह विच्छेद की डिक्री प्राप्त की थी जिसे

विवाह विच्छेद की उक्त डिक्री के खिलाफ शिकायतकर्ता द्वारा की गई अपील में 10.2.1992 को रद्द कर दिया गया था। शिकायतकर्ता के साक्ष्य बिना किसी संदेह के स्थापित करते हैं कि ए1 ने 8.3.1992 को ए4 से शादी की। प्रश्न यह है कि क्या यह तथ्य कि विवाह विच्छेद की डिक्री को रद्द कर दिया गया था और ए1 और शिकायतकर्ता के बीच विवाह को पुनर्जीवित किया गया था, ए3, ए4 और ए5 को ज्ञात था। केवल अतः कि ए3, ए1 की बहन है, यह नहीं माना जा सकता है कि वह जानती थी कि विवाह विच्छेद की डिक्री रद्द कर दी गई थी। यदि ए1, ए4 से शादी करना चाहता, तो संभव है कि वह इन तथ्यों को अपनी बहन के साथ-साथ ए4 और ए5 अर्थात क्रमशः अपनी दूसरी पत्नी और उसके पिता से भी छिपाकर रखता।

10. हमारी राय में, पीडब्लू-1, पीडब्लू-2 और पीडब्लू-3 के साक्ष्य निर्णायक रूप से यह स्थापित नहीं करते हैं कि विवाह विच्छेद की डिक्री 10.2.1992 को रद्द कर दी गई थी, इसकी जानकारी ए3, ए4 और ए5 को थी और अतः, संदेह का लाभ ए3, ए4 और ए5 को दिया जाना चाहिए। इन परिस्थितियों में, हमारी राय में, दिनांक 24.9.2008 के आक्षेपित निर्णय और आदेश, जहां तक यह ए3, ए4 और ए5 को दोषी ठहराता है और सजा देता है, को रद्द करने की आवश्यकता है। अतः, निम्नलिखित क्रम:

11. क्रिमिनल आर.सी. में पारित आक्षेपित निर्णय एवं आदेश दिनांक 24.9.2008 2005 की संख्या 1439 और 1440 को रद्द कर दिया गया है और उस हद तक खारिज कर दिया गया है जहां तक यह ए3, ए4 और ए5 को दोषी ठहराता है और सजा देता है। मुरुगयी (मूल आरोपी 3), के. पलानियाम्मल (मूल आरोपी 4), और गणेशन (मूल आरोपी 5) को भारतीय दंड संहिता की धारा 109 के साथ पढ़ी जाने वाली धारा 494 के तहत आरोप से बरी कर दिया गया है। उनके जमानत बांड खारिज किये जाते हैं।

12. अपीलों का निपटान उपरोक्त शर्तों के अनुसार किया जाता है।"

12.3 **मालन और अन्य बनाम बॉम्बे राज्य और अन्य (आपराधिक पुनरीक्षण आवेदन संख्या 750/1957)** 31.10.1957 को बॉम्बे के माननीय उच्च न्यायालय द्वारा निर्णय लिया गया।

उक्त निर्णय का प्रासंगिक भाग यहां निम्नानुसार पुन: प्रस्तुत किया गया है:-

"(5) सभी अभियुक्तों के विरुद्ध जो तथ्य पाये गये हैं वे इस प्रकार हैं।

1. *कि ये आरोपी शादी के जश्न के समय मौजूद थे जो आरोपी संख्या 9 के घर पर आयोजित किया गया था;*
2. *कि इन सभी आरोपियों को इस तथ्य की जानकारी थी कि आरोपी संख्या 1 अपनी पहली पत्नी के जीवनकाल के दौरान दूसरी पत्नी से शादी करने का इरादा रखता था;*
3. *कि इन आरोपियों ने विवाह के दौरान जोड़े पर पवित्र चावल फेंके।*

इसके अपर अभियुक्त क्रमांक 3 एवं 9 के विरुद्ध पाये गये तथ्य इस प्रकार हैं: अभियुक्त क्रमांक 3 ने विवाह समारोह समाप्त होने के पश्चात पान वितरित किया। अभियुक्त संख्या 9 ने विवाह समारोह के प्रदर्शन के दौरान "अन्तर्पात" का आयोजन किया और उसने उपरोक्त विवाह के प्रदर्शन के लिए अपने परिसर के उपयोग की अनुमति दी।

(6) विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या उपरोक्त कृत्य या उनमें से कोई आईपीसी की धारा 494 के तहत दंडनीय द्विविवाह के अपराध का दुष्प्रेरण है? इस प्रस्ताव के लिए बहुत अच्छा अधिकार है कि किसी अपराध के घटित होने पर मात्र उपस्थिति, यहां तक कि यह जानते हुए भी कि अपराध किया जा रहा है, अपने आप में एक जानबूझकर सहायता नहीं है। विद्वान सरकारी अधिवक्ता द्वारा इस प्रस्ताव पर विवाद नहीं किया जा रहा है। वास्तव में, यह प्रस्ताव इस न्यायालय द्वारा महारानी बनाम उमी आईएलआर 6 बॉम 126 में ही निर्धारित किया गया था। विद्वान सरकारी अधिवक्ता ने हालांकि तर्क दिया कि हालांकि ऐसा है, कुछ मामले ऐसे हो सकते हैं जिनमें व्यक्ति

किसी पद पर आसीन हो सकते हैं प्रभाव और रैंक ताकि उनकी उपस्थिति का मतलब अपराध करने के लिए प्रोत्साहन हो सके और उन्होंने तर्क दिया कि, जब ऐसा मामला है, तो रैंक और प्रभाव की स्थिति रखने वाले व्यक्तियों को दुष्प्रेरक माना जाना चाहिए। इस उद्देश्य के लिए, विद्वान सरकारी अधिवक्ता ने मेसर्स रतनलाल और धीरजलाल के कानून के अपराध के 19वें संस्करण के पृष्ठ 230 पर दिए गए एक अंश पर भरोसा किया। अनुच्छेद इस प्रकार है: "किसी अपराध के समय केवल उपस्थिति जानबूझकर सहायता नहीं मानी जा सकती, जब तक कि इसका वह प्रभाव डालने का इरादा था। उपस्थित होना और यह जानना कि कोई अपराध होने वाला है, दुष्प्रेरण नहीं है, जब तक कि इस प्रकार उपस्थित व्यक्ति किसी पद या प्रभाव का पद न रखता हो, ताकि जो कुछ भी घटित होता है, उसका प्रतिकार किया जा सके। परिस्थितियाँ। प्रत्यक्ष प्रोत्साहन दिया जाए....."

यह परिच्छेद रानी-महारानी बनाम लक्ष्मी मामले पर आधारित है। क्रिम रेव. Appln. 1868 की संख्या 51: रैट अन क्रि कैस 303 जहां तक इस निर्णय का प्रश्न है, उपरोक्त टिप्पणियाँ आज्ञाकारी हैं। इस मामले में, विद्वान न्यायाधीश वास्तव में इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि जिस महिला को दुष्प्रेरण के अपराध के लिए दोषी ठहराया गया था, उसके पास कोई विशेष पद नहीं था और जो कुछ किया गया था या किया जाने वाला था, उसके बारे में उसकी मात्र जानकारी को गलत नहीं ठहराया जा सकता था। एक उकसावा. अत:, इस मामले में जो टिप्पणियाँ की गईं, वे वर्तमान मामले को तय करने में कोई मदद नहीं करती हैं। मेरी राय में भले ही कोई विद्वान सरकारी अधिवक्ता की इस दलील से सहमत हो कि, कुछ परिस्थितियों में, जहां मौजूद व्यक्ति प्रभाव की स्थिति रखते हैं या उनकी उपस्थिति को आपराधिक कृत्य का प्रोत्साहन माना जाना चाहिए, वर्तमान मामले में, यह असंभव है यह माना जाए कि उपरोक्त आरोपी व्यक्तियों ने आरोपी संख्या 1 की तुलना में ऐसी स्थिति धारण की है कि जहां तक कुछ आरोपी व्यक्तियों का संबंध है, उनकी उपस्थिति को आरोपी संख्या 1 को द्विविवाह का अपराध करने के लिए

प्रोत्साहित करने के रूप में माना जाना चाहिए। विद्वान सरकारी अधिवक्ता को यह स्वीकार करना पड़ा कि उनके कार्य ऊपर बताए गए सिद्धांत के अंतर्गत नहीं आते हैं। आरोपी संख्या दुल्हन का भाई है। विद्वान सरकारी अधिवक्ता ने यह स्वीकार किया है कि जहां तक इन आरोपी व्यक्तियों का संबंध है, यह नहीं कहा जा सकता कि वे किसी पद या प्रभाव वाले पद पर हैं। और यह नहीं कहा जा सकता कि उनकी उपस्थिति ने आरोपी संख्या 1 को अमान्य विवाह करने के लिए प्रोत्साहित किया है। हालाँकि, विद्वान सरकारी अधिवक्ता ने तर्क दिया कि आरोपी संख्या 1 से 4, 9, 11 और 12 के कृत्य अलग स्तर पर हैं। आरोपी संख्या 2 और 3 दूल्हे के माता-पिता हैं। और आरोपी संख्या 4 उसका चाचा है. आरोपी संख्या 9 उस गांव का पुलिस पाटिल है जहां शादी का जश्न मनाया गया था और आरोपी संख्या 11 और 12 दुल्हन के माता-पिता हैं। यह तर्क दिया गया कि इन व्यक्तियों ने उच्च पद और प्रभाव वाले पद पर कब्जा कर लिया था और अतः, उनकी उपस्थिति को अमान्य विवाह के प्रदर्शन में आरोपी संख्या 1 को प्रोत्साहित करने के लिए माना जाना चाहिए। ऐसा प्रतीत होता है कि मामले के इस पहलू पर किसी भी निचली अदालत के समक्ष चर्चा नहीं की गई है, और किसी भी निचली अदालत ने इस विषय पर अपना दिमाग नहीं लगाया है। मामला पार्टियों के बीच मौजूद कुछ संबंधों से उत्पन्न होने वाली धारणा का है। मेरी राय में यह मामला ऐसा है जो प्रत्येक मामले में साक्ष्य पर निर्भर है। स्वीकृत तथ्य यह है कि ये व्यक्ति पूर्वोक्त रूप से संबंधित हैं और वे उपरोक्त शून्य विवाह में उपस्थित रहे। मामले के रिकॉर्ड पर और कुछ भी नहीं है जो यह दर्शाता हो कि उनकी उपस्थिति प्रोत्साहन के समान थी और यदि ये व्यक्ति विवाह के समय उपस्थित नहीं रहते, तो संभवतः द्विविवाह का अपराध नहीं होता और आरोपी नं. 1 ने उपरोक्त विवाह के निष्पादन के समय जो किया था उससे भिन्न तरीके से कार्य किया होता। कभी-कभी शादी में भी बुजुर्ग मौजूद रहते हैं जिसे वे नापसंद करते हैं। वे भावनाओं या

सामाजिक विचारों के कारण ऐसा कर सकते हैं। उपरोक्त परिस्थितियों में, इस तथ्य को ध्यान में रखें कि मैं एक पुनरीक्षण आवेदन में इस मामले से निपट रहा हूं, और इस तथ्य पर कि मामले के इस पहलू पर निचली अदालतों द्वारा विचार नहीं किया गया है। मैं यह मानने के लिए तैयार नहीं हूं कि उपरोक्त अभियुक्तों को केवल इस तथ्य से अमान्य विवाह के प्रदर्शन को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए कि वे विवाह में उपस्थित रहे।

(9) अगला बिंदु यह है कि क्या उपरोक्त आरोपी व्यक्ति द्वारा जोड़े पर पवित्र चावल फेंकने के तथ्य को उकसाने का कार्य माना जाना चाहिए। साक्ष्यों से पता चलता है कि चावल फेंकने का यह कार्य उपरोक्त व्यक्तियों द्वारा उस समय किया गया था जब 'अन्तर्पात' आयोजित किया गया था और 'मनागलास्टेक्स' का पाठ किया जा रहा था। यह प्रश्न कि क्या यह कृत्य उकसावे की श्रेणी में आता है या नहीं, आईपीसी की धारा 107 के स्पष्टीकरण 2 पर विचार करने पर निर्भर करता है। उस स्पष्टीकरण में कहा गया है कि जो कोई भी, किसी कार्य के होने से पहले या उसके समय, सुविधा के लिए कुछ भी करता है ऐसा कहा जाता है कि उस कार्य को करने में सहायता मिलती है, और, जिससे उसके कमीशन को सुविधा मिलती है। अतः, ताकि चावल फेंकने के उपरोक्त कृत्य को दुष्प्रेरण का कार्य कहा जा सके, यह जांच करना आवश्यक है कि क्या चावल फेंकने का कार्य द्विविवाह के कमीशन को सुविधाजनक बनाने के लिए किया गया था और, इस प्रकार द्विविवाह और, इस प्रकार द्विविवाह सुविधा दी गई। ऐसा नहीं दर्शाया गया है कि यह कृत्य विवाह के उत्सव में किये जाने वाले आवश्यक कृत्यों में से एक है।

...

मुझे यह नहीं दिखाया गया कि वैध विवाह के प्रदर्शन में जोड़े पर चावल फेंकना समारोह का एक आवश्यक हिस्सा था। ऐसा प्रतीत होता है कि यह काम आम तौर पर उन सभी दर्शकों द्वारा किया जाता है जो विवाह में उपस्थित रहते हैं, और यह कृत्य विवाह के उत्सव के समय उपरोक्त

व्यक्तियों की उपस्थिति के बजाय उन कृत्यों में वास्तविक भागीदारी के साथ अधिक सुसंगत है जो अंततः विवाह अनुबंध के गठन का नेतृत्व करें। मेरी राय में, उपरोक्त अधिनियम अपने आप में इस आवश्यक निष्कर्ष पर नहीं पहुंचता है कि यह कार्य विवाह के निष्पादन को सुविधाजनक बनाने के लिए किया गया था, और यह तो बिल्कुल भी नहीं कहा जा सकता है कि इससे विवाह के निष्पादन को सुविधाजनक बनाया गया था। उपरोक्त परिस्थितियों में. मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि आरोपी संख्या 3 और 9 को छोड़कर, जिनके आगे के मामले पर आगे विचार नहीं किया जाएगा, सभी आरोपी व्यक्तियों के खिलाफ जो कृत्य किए गए हैं, वे आवश्यक रूप से उकसावे के कार्य की श्रेणी में नहीं आते हैं।

(10) इससे पहले कि मैं उपरोक्त अभियुक्त संख्या 2, 4, 5 से 8 से 13 के मामले से अलग हो जाऊं, मैं उल्लेख कर सकता हूं कि विद्वान सरकारी अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया था कि, किसी भी मामले में, दुल्हन के माता-पिता। अर्थात आरोपी संख्या 11 और 12 को उकसाने के अपराध के लिए दोषी ठहराया जाना चाहिए। उन्होंने तर्क दिया कि दुल्हन कृष्णाबाई की उम्र 16 वर्ष से कम होने के कारण, जब तक कि उपरोक्त दोनों माता-पिता ने लड़की की शादी नहीं कर दी, तब तक विवाह समारोह नहीं किया जा सकता था। हालाँकि, अभियोजन पक्ष के पास इस बात का कोई साक्ष्य नहीं है कि इन अभियुक्तों ने ऐसी कोई भूमिका निभाई थी। एकमात्र गवाह आरोपी संख्या 11 और 12 द्वारा निभाई गई किसी भी भूमिका के बारे में एक शब्द भी नहीं कहता है, उन कृत्यों के अलावा जिन्हें पहले ही विद्वान परीक्षण न्यायाधीश और विद्वान अपीलीय न्यायाधीश द्वारा साबित माना जा चुका है। अतः, मुझे नहीं लगता कि आरोपी संख्या 11 और 12 की सजा को इस आधार पर बरकरार रखना उचित होगा कि इन दोनों व्यक्तियों ने 'कन्यादान' दिया था या कोई अन्य विशेष कार्य किया था जो उन्हें धारा 107 के दायरे में लाएगा। आई.पी.सी.

(11) उपरोक्त कारणों से जहां तक अभियुक्त संख्या 2, 4, 5 से 8 और 11 से 13 का संबंध है, वर्तमान पुनरीक्षण आवेदन स्वीकार किए जाने योग्य है, और उनकी दोषसिद्धि को खारिज किया जाना चाहिए।

(12) जहां तक आरोपी संख्या 3 का संबंध है, एकमात्र अपर तथ्य जो पाया गया वह यह है कि उसने शादी के जश्न के बाद पैन बांटा था। मेरी राय में यह अपने आप में एक अहानिकर कृत्य है और यह नहीं कहा जा सकता कि उसका कृत्य विवाह को सुविधाजनक बनाने के इरादे से किया गया था, जो पहले ही हो चुका था, और न ही यह माना जा सकता है कि विवाह वितरण के परिणामस्वरूप किया गया था। पैन का.

(13) जहां तक आरोपी संख्या 9 का प्रश्न है, साक्ष्य से पता चलता है कि उसने न केवल अपने परिसर को शादी के प्रदर्शन के लिए इस्तेमाल करने की अनुमति दी, बल्कि उसने शादी के प्रदर्शन के दौरान अंतरपत को भी अपने पास रखा। आईएलआर 6 बीओएम 126 में, जिसका मैंने पहले ही उल्लेख किया है, यह माना गया था कि किसी के परिसर को विवाह के उद्देश्यों के लिए उपयोग करने की अनुमति देने मात्र से जानबूझकर सहायता नहीं मिलती है और, यह अधिनियम इसके अंतर्गत आता है उपरोक्त धारा 107 के स्पष्टीकरण 2 का दायरा। इस पर श्री कोतवाल का उत्तर था कि यदि ऐसा है तो भी धारा 114 के अंतर्गत अपराध किया हुआ नहीं कहा जा सकता, क्योंकि धारा 114 के अंतर्गत अपराध को घर लाने के लिए सबसे पहले यह आवश्यक है यह सब अपराध आईपीसी की धारा 109 के दायरे में आना चाहिए, और धारा 109 के तहत एक अपराध को प्रतिबद्ध कहा जा सकता है, यह केवल पर्याप्त नहीं है कि उकसाने का कार्य होना चाहिए, बल्कि, इसके अलावा, अभियोजन पक्ष को यह साबित करना होगा कि अपराध उकसावे के परिणामस्वरूप किया गया था। उन्होंने तर्क दिया कि यद्यपि आरोपी संख्या 9 ने उपरोक्त जानबूझकर दिया होगा और, यह नहीं कहा जा सकता है कि उसने द्विविवाह का अपराध 'अन्तर्पात' रखने के कार्य के

परिणामस्वरूप किया था, प्रथम दृष्टया, ऐसा है। हालाँकि, विद्वान सरकारी अधिवक्ता ने आईपीसी की धारा 107 के स्पष्टीकरण 2 पर भरोसा किया। उस स्पष्टीकरण में, अन्य बातों के साथ-साथ कहा गया है कि एक कार्य को उकसावे के परिणामस्वरूप किया गया कहा जाता है, जब वह उस सहायता से किया जाता है जो उकसावे का गठन करती है। विद्वान सरकारी अधिवक्ता ने तर्क दिया कि वर्तमान मामले के तथ्य उपरोक्त स्पष्टीकरण के दायरे में आते हैं। श्री. नहीं दिया गया था. मुझे नहीं लगता, कि मैं इस दृष्टिकोण की सदस्यता ले सकता हूँ। उपरोक्त स्पष्टीकरण में ऐसा कुछ भी नहीं है जो उपरोक्त कथन को उचित ठहराता हो।

मेरी राय में, यह निर्धारित करने के लिए कि क्या किसी कार्य के परिणामस्वरूप अपराध हुआ है, एकमात्र महत्वपूर्ण बात यह है कि क्या यह कार्य संबंधित दुष्प्रेरक की सहायता से किया गया था, और यदि ऐसा था की सहायता से प्रतिबद्ध है, तो, दुष्प्रेरक का कार्य इस तथ्य के संबंध में गिर जाएगा कि 'अंतरपात' आरोपी संख्या 9 द्वारा आयोजित किया गया था और यह पूरी जानकारी के साथ किया गया था कि विवाह एक ठंडा विवाह था, मेरी राय में , आरोपी संख्या 9 का कृत्य धारा के स्पष्टीकरण 2 के दायरे में आता है। 107 आई.पी.सी. श्रीमान कोतवाल ने तर्क दिया कि 'अन्तर्पात' रखने का कार्य विवाह के प्रदर्शन से पहले किया गया था, और अत:, इसे जानबूझकर सहायता का कार्य नहीं माना जाना चाहिए। यह तर्क आईपीसी की धारा 107 के स्पष्टीकरण 2 को नजरअंदाज करता है। उस स्पष्टीकरण में विशिष्ट शब्दों में कहा गया है कि अपराध करने से पहले उकसाने का कार्य हो सकता है। अत:, मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है कि आरोपी संख्या 9 का कृत्य आईपीसी की धारा 107 में 'उकसाने' शब्द की परिभाषा के अंतर्गत आता है। ताकि धारा 107 का स्पष्टीकरण 2 लागू हो सके, यह है और क्या उस सहायता से यह कार्य किया गया है या अपराध किया गया था. मेरी राय में, उपरोक्त कृत्य, जो आरोपी संख्या 9 के खिलाफ लाया गया है, एक

सहायता का कार्य था और उस सहायता से, आरोपी संख्या 11 ने द्विविवाह का अपराध किया। अत:, मेरी राय में, जहां तक आरोपी संख्या 9 का प्रश्न है, उसके खिलाफ उकसाने का अपराध लाया गया है और उसे सही तरीके से दोषी ठहराया गया है। अत: अभियुक्त संख्या 9 का पुनरीक्षण आवेदन खारिज कर दिया जाएगा और जहां तक अन्य अभियुक्तों के पुनरीक्षण आवेदन का प्रश्न है, वह भी स्वीकार किया जाएगा।

12.4 **सी.एस. वरदाचारी और अन्य बनाम सी.एस. शांति क्रिमिनल म.प्र.** 24.12.1986 को मद्रास के माननीय उच्च न्यायालय द्वारा निर्णयित 1983 की संख्या 7370, इसे निम्नानुसार देखा गया है:

"वर्तमान मामले में, यह बताने के अलावा कि 3 से 8 आरोपी मौजूद थे और उन्होंने जोड़े पर पवित्र चावल फेंके और उन्हें आशीर्वाद दिया, यह दिखाने के लिए बिल्कुल भी कुछ नहीं है कि उन्होंने जानबूझकर द्विविवाह के अपराध में सहायता की। यहां तक कि इस आरोप के संबंध में कि उन्होंने पवित्र चावल फेंके, जोड़े को आशीर्वाद दिया और उपहार दिए, शिकायतकर्ता ने शादी के किसी भी गवाह की जांच नहीं की है और कहा गया था कि कथित जानकारी उसके पिता को शिकायत में उद्धृत गवाह द्वारा दी गई थी। बारी ने शिकायतकर्ता को भी यही बात बताई। अत:, मुझे इस संबंध में अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता के तर्क में काफी दम नजर आता है।"

12.5 **रूपा और अन्य बनाम यूपी राज्य और अन्य. (आपराधिक विविध आवेदन संख्या 31568/2011)** में दिए गए निर्णय का प्रासंगिक भाग। माननीय उच्च न्यायालय इलाहाबाद द्वारा 29.08.2013 को तय किया गया, इस प्रकार है:-

"27. किसी अपराध को दुष्प्रेरित करने के लिए यह आवश्यक है कि दुष्प्रेरित करने वाले ने या तो किसी व्यक्ति को ऐसा अपराध करने के लिए उकसाया हो या ऐसा गैरकानूनी कार्य करने की साजिश में शामिल हुआ हो। मौजूदा मामले में, आवेदकों के खिलाफ कोई आरोप नहीं है कि उन्होंने राजेश

कुमार देवरार को आईपीसी की धारा 494 के तहत दंडनीय अपराध करने के लिए उकसाया। ऐसा कोई आरोप नहीं है कि आवेदक आईपीसी की धारा 494 के तहत अपराध करने के लिए किसी आपराधिक साजिश में शामिल थे। आवेदक संख्या 1 का मामला यह है कि उसे विपक्षी संख्या 2 के साथ राजेश कुमार देवरार की किसी पूर्व शादी के बारे में पता नहीं था। दिनांक 7.12.2010 की घटना के समय उसकी उपस्थिति को पहले की तरह गलत ठहराया गया है। राजेश कुमार देवरार की पूर्व शादी के बारे में किसी भी जानकारी के अभाव में, आवेदकों को आईपीसी की धारा 494 के साथ धारा 109 या 114 आईपीसी के तहत अपराध के लिए दोषी नहीं ठहराया जा सकता है। जहां तक केस डायरी में उपलब्ध सामग्री का प्रश्न है, यह स्पष्ट है कि राजेश की दूसरी शादी विपक्षी पैरी संख्या 2 की उपस्थिति में नहीं हुई थी। योगेश कुमार एक फोटोग्राफर है, जिसने शादी की फोटोग्राफी और वीडियोग्राफी की थी, जो 9.12.2010 को हरिद्वार में हुई थी, आगे की जांच के दौरान, लक्ष्मी शंकर श्रीवास्तव, रोशन सिंह और सुरेंद्र सिंह के बयान सीआरपीसी धारा 161 के तहत दर्ज किए गए थे। जिन्होंने कहा था कि वे हरिद्वार में होटल व्यू गए और पाया कि राजेश कुमार देवरार और रूपा के बीच विवाह संपन्न हुआ और सात फेरे लिए गए। उन्होंने राजेश कुमार देवरार से प्रश्न किया कि उनकी पहली पत्नी जीवित है और उन्होंने दूसरी शादी कर उचित काम नहीं किया है, लेकिन राजेश ने कोई उत्तर नहीं दिया। इन तीनों गवाहों के बयानों से इतना ही पता चलता है कि उन्होंने राजेश कुमार देवरार से दूसरी शादी करने का विरोध किया था, लेकिन आवेदकों को यह नहीं बताया कि राजेश कुमार देवरार की शादी इससे पहले प्रति पक्ष संख्या 2 के साथ हुई थी। उन्होनें यह नहीं बताया कि क्या सप्तपदी का अनुष्ठान किया गया था जो वैध विवाह के लिए एक आवश्यक समारोह है।

28. एफआईआर में या केस डायरी में दर्ज गवाहों के बयानों में ऐसा कुछ भी नहीं है जो यह दर्शाता हो कि आवेदकों को राजेश कुमार देवरार के साथ मुखबिर की कथित शादी के बारे में पहले से जानकारी थी। किसी व्यक्ति को द्विविवाह के लिए उकसाने के अपराध के लिए दोषी

ठहराने के लिए, यह साबित करना आवश्यक है कि ऐसे व्यक्ति को जो आईपीसी की धारा 494 के तहत अपराध का दोषी है, मुख्य व्यक्ति की पहली शादी के अस्तित्व की पूर्व जानकारी होनी चाहिए। इस तरह के ज्ञान के अभाव में, किसी व्यक्ति को आईपीसी की धारा 494 के तहत अपराध करने के लिए उकसाने का दोषी नहीं कहा जा सकता है। हालाँकि, यह ध्यान दिया जा सकता है कि प्रति पक्ष संख्या 2 और राजेश कुमार देवरार के बीच कथित पूर्व विवाह एक स्वीकृत तथ्य नहीं है और अभी तक सकारात्मक साक्ष्य द्वारा स्थापित किया जाना है।

29. सी.एस. वरदाचारी और अन्य बनाम सी.एस. शांति 1987 सीआरआई एलजे 1048 में, मद्रास उच्च न्यायालय ने निम्नानुसार व्यवस्था दी:

केवल यह आरोप कि आरोपी मौजूद थे और उन्होंने जोड़े पर पवित्र चावल फेंके और उन्हें आशीर्वाद दिया, यह दिखाने के लिए बिल्कुल भी नहीं है कि उन्होंने जानबूझकर द्विविवाह का अपराध करने में सहायता की। यहां तक कि इस आरोप के संबंध में कि उन्होंने पवित्र चावल फेंके, जोड़े को आशीर्वाद दिया और उपहार दिए, शिकायतकर्ता ने शादी के किसी भी गवाह की जांच नहीं की है और कहा गया था कि कथित जानकारी शिकायत में उद्धृत गवाह द्वारा उसके पिता को दी गई थी। बदले में उसने शिकायतकर्ता को भी यही बात बताई। अत:, मुझे इस संबंध में अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता के तर्क में काफी दम नजर आता है।

30. वर्तमान मामले में, यह दिखाने के लिए कोई साक्ष्य नहीं है कि आईपीसी की धारा 494 के तहत अपराध करने के लिए आवेदकों की ओर से कोई जानबूझकर उकसाया गया था। राजेश कुमार देवरार के साथ आवेदक सं. 1 के विवाह के समय आवेदक क्रमांक 2, 3 और 4 की उपस्थिति मात्र उन्हें उनके अतीत पर किसी भी आपराधिक इरादे के बिना आपराधिक रूप से उत्तरदायी नहीं बनाती है।

इन परिस्थितियों में, इस न्यायालय की राय है कि राजेश कुमार देवरार

और उनके परिवार के सदस्यों के साथ-साथ छोटे सिंह और राम सजन, जो 7.12.2010 को राजेश कुमार देवरार के घर पर मौजूद थे, को इसके बारे में जानकारी होने का अनुमान लगाया जा सकता है कि राजेश कुमार देवरार की कथित पूर्व शादी प्रति पक्ष संख्या 2 के साथ हूई है और उन पर आईपीसी की धारा 494 या इसके लिए उकसाने के तहत दंडनीय अपराध के लिए मुकदमा चलाया जा सकता है, लेकिन जहां तक आवेदकों का प्रश्न है, यह सुझाव देने के लिए कोई सामग्री नहीं है कि उन्हें इसके बारे में कोई पूर्व ज्ञान था कि प्रतिपक्ष संख्या 2 और राजेश कुमार देवरार के बीच कथित विवाह हुआ था और अत:, उन पर आईपीसी की धारा 494 के साथ धारा 109 या 114 आईपीसी के तहत अपराध के लिए मुकदमा नहीं चलाया जा सकता है।

12.6 **अचन वीटिल गोविंदन नांबियार बनाम कैकुनाथ पुथिया वीटिल रोहिणी सीआरएल एम.सी.संख्या 907/1985,** में 17.10.1985 को माननीय केरल उच्च न्यायालय द्वारा अपने निर्णय इसे निम्नानुसार गया है:

"1. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के तहत दायर इस याचिका में एकमात्र प्रश्न जो अपीलार्थी चाहता था कि यह अदालत तय करे कि क्या ऐसे पुरुष या महिला के अलावा कोई अन्य व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति के साथ विवाह करता है, जिसकी कानूनी रूप से विवाहित पत्नी या पति है पर मौजूदा वैवाहिक संबंध के साथ रहने पर भारतीय दंड संहिता की धारा 494 के साथ पठित धारा 109 के तहत दंडनीय अपराध के लिए मुकदमा चलाया जा सकता है।

3. इस बात पर कोई विवाद नहीं हो सकता है कि जो कोई भी, चाहे वह पति हो या पत्नी, पति या पत्नी के जीवित रहते हुए, किसी भी मामले में शादी करता है, जिसमें ऐसा विवाह ऐसे पति या पत्नी के जीवन के दौरान होने के कारण शून्य है, वह आईपीसी की धारा 494 के तहत अपराध के लिए दोषी है। अत: यह भी विवादित नहीं है कि कोई पुरुष या महिला जो किसी अन्य के साथ विवाह करता है, जो इस तरह के विवाह करने के लिए धारा 494 के तहत दंडनीय है, वह धारा 494 के

साथ पढ़ी गई धारा 109 के तहत दंडनीय अपराध का दोषी है। यदि वह अपेक्षित ज्ञान के साथ ऐसा विवाह करता है। विवाद केवल यह है कि क्या द्विविवाह को बढ़ावा देने के लिए किसी और पर मुकदमा चलाया जा सकता है।

4. ... अपीलार्थी का मामला यह है कि विवाह पति-पत्नी की स्वतंत्र इच्छा और सहमति से होता है और किसी अन्य द्वारा उकसाने या उकसाने का कोई प्रश्न ही नहीं हो सकता है। उनके अनुसार, यदि यह पार्टियों की स्वतंत्र इच्छा और सहमति से नहीं है और यदि यह उकसावे का परिणाम है तो यह बिल्कुल भी विवाह नहीं है और अत: इसे धारा 494 या धारा 109 के अंतर्गत लाया नहीं जा सकता है। इसके लिए और सिर्फ इसी कारण से वह चाहते थे कि मैं यह पता लगाऊं कि उनके सहित आरोपी सं. 3 और अन्य आरोपियों पर बिल्कुल भी मुकदमा नहीं चलाया जा सकता है और इस अदालत को अंतर्निहित अधिकार क्षेत्र का इस्तेमाल करते हुए उनके खिलाफ शिकायत को रद्द करना होगा।

6. यह सच है कि कुछ मामलों में विवाह एक अनुष्ठाप्ति है और कुछ अन्य मामलों में यह एक अनुबंध है। चाहे यह अनुष्ठापन हो या अनुबंध, पार्टियों की सहमति आवश्यक है। किसी भी अन्य चीज़ की तरह ही विवाह के लिए भी ख़राब परिस्थितियों की वकालत की जा सकती है और उसे साबित किया जा सकता है। उकसावे में ऐसी कोई भी प्रतिकूल परिस्थिति शामिल नहीं होनी चाहिए जिसके आधार पर विवाह को टाला जा सके। दुष्प्रेरण को भारतीय दंड संहिता की धारा 107 में परिभाषित किया गया है। इसमें किसी व्यक्ति को कोई काम करने के लिए उकसाना, साजिश में शामिल होना या जानबूझकर किसी काम में साथ देना या किसी काम को करने में गैरकानूनी चूक करना शामिल है। उकसावे में जानबूझकर निर्वचन या भौतिक तथ्यों को जानबूझकर छिपाना शामिल हो सकता है, जिसका खुलासा करने के लिए उकसाने वाला बाध्य है। वे परिस्थितियाँ बिगाड़ने वाले हो सकते हैं। लेकिन सहायता में केवल कार्य करने की सुविधा के लिए कुछ भी करना शामिल है। जो लोग धारा 494

के दायरे में आकर विवाह कर रहे हैं, वे स्वयं जानबूझकर या तो धारा 494 के तहत अपराध करते हैं या धारा 494 के साथ पठित धारा 109 के तहत। उकसाने वाला जो कार्य करता है वह केवल मुख्य अपराधी को अपराध करने में सहायता करता है। दुष्प्रेरण में दुष्प्रेरक की सक्रिय सहभागिता शामिल होती है। उकसावे की श्रेणी में आने के लिए मनःस्थिति या इरादा होना आवश्यक है।

7. यह कहना सही नहीं होगा कि भारतीय दंड संहिता की धारा 494 के तहत किसी अपराध में उकसावे का प्रश्न ही नहीं उठता। विवाह करने वाले या उसे संपन्न कराने वाले पक्ष स्वयं केवल तभी उत्तरदायी हो सकते हैं, जब अपेक्षित आपराधिक कारण हो। अत: उकसावे से इंकार करना सही नहीं होगा। यह सच है कि भारतीय दंड संहिता में धारा 49(एसआईसी) के तहत दंडनीय अपराध के लिए उकसाने पर सजा का कोई स्पष्ट प्रावधान नहीं है। लेकिन इस तरह के अपराध के लिए उकसाना भारतीय दंड संहिता की धारा 109 और 114 के तहत दंडनीय है, जैसा कि ए.आई.आर. 1952 मद्रास 193 उसके बाद 1955 सीआरएल। एल.जे. 1359 में माना गया है। जैसा कि ए.आई.आर. 1931 लाहौर 194 में माना गया है कि इस बात का साक्ष्य होना चाहिए कि उकसाने का आरोपी व्यक्ति जानता था कि जिस व्यक्ति से शादी हुई है वह दूसरे की पत्नी है। अत: यह तर्क देना निरर्थक है कि द्विविवाह के लिए उकसाना आपराधिक न्यायशास्त्र के लिए अज्ञात है। इस बात पर विचार करने का कोई मतलब नहीं है कि दुष्प्रेरण द्वारा किया गया विवाह कोई विवाह नहीं है और अत: धारा 109 धारा 494 के तहत अपराध के लिए नहीं है। यहां तक कि भारतीय दंड संहिता भी किसी व्यक्ति को इच्छा के विरुद्ध शादी करने के लिए मजबूर करके किए जाने वाले अपराधों पर विचार करती है। उस व्यक्ति का उदाहरण के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 366 है।"

13. यह न्यायालय इस प्रकार मानता है कि निम्नलिखित सिद्धांतों को पूर्ववर्ती कानूनों के परिणामस्वरूप समाप्त कर दिया गया है, जिनका विश्लेषण यहां ऊपर

किया गया है;

13.1 दर्ज की गई एफआईआर/शिकायत में लगाए गए आरोपों की सत्यता पर संज्ञान के चरण में विचार नहीं किया जा सकता है। हालाँकि, यदि आरोपी के खिलाफ अस्पष्ट आरोप लगाए गए हैं, और प्रथम दृष्टया मामले की अनुपस्थिति में, ऐसी एफआईआर/शिकायत/संज्ञान के आदेश को रद्द करना उच्च न्यायालय के अपने अंतर्निहित अधिकार क्षेत्र के अंतर्गत होगा।

13.2 जैसा कि **चांद धवन (सुप्रा.)** के मामले में उल्लेख किया गया है, पहली/पूर्व शादी के निर्वाह के ज्ञान के बावजूद द्विविवाह विवाह के अनुष्ठान के समय केवल उपस्थिति, जानबूझकर सहायता करने अर्थात उकसावे के बराबर नहीं होगी।

13.3 जैसा कि **मालन और अन्य(सुप्रा.)** के मामले में उल्लेख किया गया है। दूसरी शादी के अनुष्ठान के समय; केवल व्यक्तियों की उपस्थिति, पवित्र/पवित्र चावल फेंकने का कार्य, 'कन्यादान' या किए गए अन्य विशेष कार्य, 'पान' का वितरण को द्विविवाह के लिए उकसाना नहीं माना जाता है। हालाँकि, द्विविवाह के लिए परिसर को पट्टे पर देना या किराए पर देना भी दुष्प्रेरण नहीं माना गया था, तथ्यात्मक मैट्रिक्स को देखने पर, 'अन्तर्पात' के प्रदर्शन कार्य को दुष्प्रेरण माना गया था। इसके अलावा, व्यक्ति; बुजुर्ग, परिवार के अन्य सदस्य या अन्य, जो द्विविवाह में भाग लेते हैं, भावनात्मक या सामाजिक विचारों से या अन्यथा, उनकी अस्वीकृति के बावजूद ऐसा कर सकते हैं और इसे द्विविवाह के लिए उकसाना भी नहीं कहा जा सकता है।

13.4 जैसा कि **सीएस वरदाचारी (सुप्रा.)** के मामले में उल्लेख किया गया था, कि पवित्र/पवित्र चावल फेंकना, जोड़े को आशीर्वाद देना और/या उपहार देना द्विविवाह के लिए उकसाना नहीं माना जाएगा।

14. यह न्यायालय यह भी मानता है कि केरल के माननीय उच्च न्यायालय ने, **अचन वीटिल गोविंदन नांबियार (सुप्रा.)** के मामले में, जब वर्तमान मुद्दे जैसे मुद्दे को उठाया, तो यह दृष्टिकोण अपनाने से इनकार कर दिया कि हालांकि आईपीसी में सीधे तौर पर द्विविवाह के लिए उकसाने को एक अपराध माना गया है, लेकिन इसके विपरीत दृष्टिकोण रखना भी उचित नहीं होगा। हालाँकि,

यह न्यायालय ऐसा दृष्टिकोण अपनाने में असमर्थ है।

15. **इस न्यायालय ने पाया कि वर्तमान मामले में मुद्दा इस बात से संबंधित है कि क्या आईपीसी की धारा 494 या 495 के तहत द्विविवाह के अपराध में आरोपित व्यक्ति के तीसरे व्यक्ति, रिश्तेदारों या अन्यथा, के खिलाफ उकसाने के अपराध के लिए आईपीसी के तहत कार्रवाई की जा सकती है।**

संक्षिप्तता के लिए, आईपीसी की धारा 494 और 495 को इस प्रकार पुन: प्रस्तुत किया गया है:-

> ***494. पति या पत्नी के जीवनकाल में पुनः विवाह करना।***
>
> *जो कोई, पति या पत्नी के जीवित रहते हुए, किसी ऐसे मामले में विवाह करता है जिसमें ऐसा विवाह ऐसे पति या पत्नी के जीवन के दौरान होने के कारण शून्य है, तो उसे उस अवधि के लिए कारावास की सजा दी जाएगी जिसे सात वर्ष तक बढ़ाया जा सकता है, और जुर्माने के लिए भी उत्तरदायी होगा।*
>
> *अपवाद.–यह धारा किसी ऐसे व्यक्ति पर लागू नहीं होती है जिसका ऐसे पति या पत्नी के साथ विवाह सक्षम क्षेत्राधिकार वाले न्यायालय द्वारा शून्य घोषित कर दिया गया हो, न ही किसी ऐसे व्यक्ति पर लागू होती है जो पूर्व पति या पत्नी के जीवन के दौरान विवाह करता है, यदि ऐसा पति या पत्नी, बाद के विवाह के समय, ऐसे व्यक्ति से सात वर्ष तक लगातार अनुपस्थित रहे, और ऐसे व्यक्ति ने उस समय के भीतर उसके जीवित होने के बारे में नहीं सुना होगा, बशर्ते कि ऐसा पश्चातवर्ती विवाह करने वाला व्यक्ति ऐसा विवाह होने से पहले, उस व्यक्ति को, जिसके साथ ऐसा विवाह हुआ है, उन तथ्यों की वास्तविक स्थिति के बारे में सूचित करें, जहां तक वे उसकी जानकारी में हों।*
>
> ***495. यही अपराध उस व्यक्ति से पूर्व विवाह को छिपाना भी है जिसके साथ आगामी विवाह का अनुबंध किया गया है।***
>
> *जो कोई उस व्यक्ति से, जिसके साथ आगामी विवाह किया गया है, पूर्व विवाह के तथ्य को छिपाकर अंतिम पूर्ववर्ती धारा में परिभाषित अपराध*

करेगा, उसे किसी ऐसी अवधि के लिए कारावास की सजा दी जाएगी जिसे दस वर्ष तक बढ़ाया जा सकता है, और उस पर जुर्माना भी लगाया जा सकता है।

16. इस न्यायालय का मानना है कि **आईपीसी की धारा 494 और 495 के तहत अपराध गैर-संज्ञेय और जमानती** हैं और **आईपीसी की धारा 494** के तहत **अपराध सीआरपीसी की धारा 320** के अनुसार शमनीय है; कानून की उक्त स्थिति माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **परमेश्वरी बनाम वेनिला (आपराधिक अपील संख्या 741/1999)** के मामले में 02.08.1999 को दिए गए निर्णय में भी स्पष्ट की गई थी।

उक्त निर्णय का प्रासंगिक भाग यहां नीचे पुन: प्रस्तुत किया गया है:-

"2. अपीलार्थीओं को आईपीसी की धारा 109 के साथ पठित धारा 494 के तहत दंडनीय अपराध के लिए दोषी ठहराया गया है। वे अब अपीलार्थी शिवप्रकाशम की पत्नी, शिकायतकर्ता वेनिला के साथ एक समझौते पर पहुंच गए हैं। उनके गांव मन्नाचनल्लूर के पंचायदारों की उपस्थिति में समझौता किया गया। पार्टियों और पंचायदारों द्वारा विधिवत हस्ताक्षरित समझौता समझौते को उनके न्यायालय के रिकॉर्ड पर रखा गया है। अपीलार्थीओं और शिकायतकर्ता वेनिला ने अब अपीलार्थीओं के खिलाफ साबित अपराध को कम करने की अनुमति के लिए एक संयुक्त आवेदन दायर किया है। उनकी पत्नी ने भी स्वतंत्र रूप से अपनी सहमति दाखिल की है और उनका प्रतिनिधित्व एक अधिवक्ता ने भी किया है। ऐसे में उसे समझौता उचित और पत्नी के हित में प्रतीत होता है। पत्नी द्वारा दी गई सहमति भी स्वतंत्र एवं वास्तविक प्रतीत होती है। वह एक पढ़ी-लिखी महिला हैं. इस मामले में उसका अपराध पत्नी की सहमति और न्यायालय की अनुमति से शमनीय है। हमारी राय में, यह एक उपयुक्त मामला है जिसमें अनुमति दी जानी चाहिए। तदनुसार, हम अपराध को कम करने की अनुमति के लिए आवेदन स्वीकार करते हैं जिसके परिणामस्वरूप अपीलार्थी उस अपराध से बरी हो जाते हैं जिसके लिए उन्हें दोषी ठहराया गया है। उनकी अपीलों का

तदनुसार निपटारा किया जाता है। अपीलार्थीओं द्वारा निष्पादित जमानत बांड रद्द कर दिए जाएंगे।

16.1 यह न्यायालय आगे मानता है कि आईपीसी का अध्याय V उकसावे की योजना से संबंधित है, जिसकी आगे की जांच के लिए विवाद के संबंध में निर्णय लेने की आवश्यकता है।

संक्षिप्तता के लिए, प्रासंगिक धाराएं यहां निम्नानुसार पुन: प्रस्तुत की गई हैं: -

धारा 107. किसी बात का दुष्प्रेरण.–

कोई व्यक्ति किसी कार्य को करने के लिए उकसाता है, जो-पहला–किसी भी व्यक्ति को वह काम करने के लिए उकसाता है; या

दूसरा.–उस चीज़ को करने के लिए किसी भी साजिश में एक या एक से अधिक अन्य व्यक्तियों या व्यक्तियों के साथ शामिल होता है, यदि उस साजिश के अनुसरण में और उस चीज को करने के लिए कोई कार्य या अवैध चूक होती है; या

*तीसरा.–किसी कार्य या अवैध चूक द्वारा **जानबूझकर** उस कार्य को करने में सहायता करना।*

*स्पष्टीकरण 1.–कोई व्यक्ति जो जानबूझकर गलत निर्वचन करके, या किसी भौतिक तथ्य जिसका खुलासा करने के लिए वह बाध्य है, को **जानबूझकर छिपाकर स्वेच्छा से कोई कार्य कराता है** या प्राप्त करता है, या करवाने या प्राप्त करने का प्रयास करता है, ऐसा कहा जाता है कि वह उस चीज़ को करने के लिए उकसाता है।*

*स्पष्टीकरण 2.–जो कोई, व्यक्ति किसी कार्य के किए जाने से पहले या उसके समय, **उस कार्य के किए जाने को सुविधाजनक बनाने के लिए ऐसा कुछ करता है**, और इस प्रकार उसके किए जाने को सुकर बनाता है, वह उस कार्य को करने में सहायता करता है, ऐसा कहा जाता है।*

***108. दुष्प्रेरक** - कोई व्यक्ति जो किसी अपराध को दुष्प्रेरित*

करता है, जो या तो किसी अपराध को करने के लिए दुष्प्रेरित करता है, या किसी ऐसे कार्य को करने के लिए दुष्प्रेरित करता है जो अपराध होगा, यदि वह अपराध करने में कानून द्वारा सक्षम व्यक्ति द्वारा समान इरादे या ज्ञान के साथ किया जाता है। दुष्प्रेरक के रूप में.

स्पष्टीकरण 1.–किसी कार्य के अवैध लोप के लिए दुष्प्रेरण एक अपराध की श्रेणी में आ सकता है, यद्यपि दुष्प्रेरक स्वयं उस कार्य को करने के लिए बाध्य नहीं हो सकता है।

स्पष्टीकरण 2.- दुष्प्रेरण का अपराध करने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि दुष्प्रेरित कार्य किया जाए, या अपराध करने के लिए अपेक्षित प्रभाव उत्पन्न किया जाए।

स्पष्टीकरण 3.–यह आवश्यक नहीं है कि दुष्प्रेरित व्यक्ति कानून द्वारा अपराध करने में सक्षम हो, या उसके पास दुष्प्रेरित करने वाले के समान ही दोषी इरादा या ज्ञान हो, या कोई दोषी इरादा या ज्ञान हो।

स्पष्टीकरण 4.–किसी अपराध का दुष्प्रेरण एक अपराध है, ऐसे दुष्प्रेरण का दुष्प्रेरण भी एक अपराध है।

स्पष्टीकरण 5.–षड्यंत्र द्वारा दुष्प्रेरण का अपराध करने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि दुष्प्रेरक उस अपराध को करने वाले व्यक्ति के साथ मिलकर अपराध करे। यह पर्याप्त है यदि वह उस षडयंत्र में शामिल है जिसके अनुसरण में अपराध किया गया है।

109. दुष्प्रेरण की सजा यदि दुष्प्रेरित कार्य परिणामस्वरूप किया जाता है और जहां इसकी सजा के लिए कोई स्पष्ट प्रावधान नहीं किया गया है।

जो कोई भी किसी अपराध के लिए उकसाता है, यदि उकसाया गया कार्य उकसाने के परिणामस्वरूप किया जाता है, और इस संहिता द्वारा ऐसे उकसावे की सजा के लिए कोई स्पष्ट प्रावधान नहीं किया गया है, तो उसे अपराध के लिए प्रदान की गई सजा से दंडित किया जाएगा। स्पष्टीकरण.-कोई कार्य या अपराध दुष्प्रेरण के परिणामस्वरूप किया गया

कहा जाता है, जब वह उकसावे के परिणामस्वरूप, या षडयंत्र के अनुसरण में, या उस सहायता से किया जाता है जिससे दुष्प्रेरण बनता है।

110. यदि दुष्प्रेरित व्यक्ति दुष्प्रेरक के इरादे से भिन्न इरादे या ज्ञान के साथ कार्य करता है, तो दुष्प्रेरण के लिए दण्ड- *जो कोई भी अपराध करने के लिए दुष्प्रेरित करता है, यदि दुष्प्रेरित व्यक्ति दुष्प्रेरक के इरादे या जानकारी से भिन्न इरादे या जानकारी के साथ कार्य करता है, तो उसे दुष्प्रेरित करने वाले के इरादे या जानकारी से भिन्न इरादे से कार्य करने पर दुष्प्रेरण की सजा दी जाएगी। उस अपराध के लिए सज़ा का प्रावधान किया गया है जो तब किया गया होता यदि कार्य उकसाने वाले के इरादे या जानकारी के साथ किया गया हो, किसी अन्य के साथ नहीं।*

111. **दुष्प्रेरक का दायित्व, जब कार्य दुष्प्रेरित किया गया हो कोई और दूसरा कार्य किया गया हो।**–जब एक कार्य दुष्प्रेरित किया गया हो और दूसरा कार्य किया गया हो, तो दुष्प्रेरक किए गए कार्य के लिए उसी तरीके से और उसी सीमा तक उत्तरदायी होता है जैसे कि उसने सीधे तौर पर किया हो। इसे दुष्प्रेरित किया गया: बशर्ते कि किया गया कार्य दुष्प्रेरण का एक संभावित परिणाम था, और उकसावे के प्रभाव में, या सहायता से या उस साजिश के अनुसरण में किया गया था जिसने दुष्प्रेरण किया था।

17. आईपीसी की धारा 107 को पढ़ने पर ही, यह स्पष्ट है कि उकसाने का कार्य तीन तरीकों में से किसी एक में हो सकता है; अर्थात्, उकसाना, साजिश, या जानबूझकर सहायता। इस प्रकार इसके लिए सकारात्मक कार्य की आवश्यकता होती है, जो किसी दिए गए मामले के तथ्यात्मक मैट्रिक्स द्वारा पता लगाया जा सकता है।

17.1 यह उक्त धारा की व्याख्या II के समान है, जिसमें कहा गया है कि जो कोई भी अपराध करने से पहले उसके अपराध को सुविधाजनक बनाने के लिए कुछ

भी करता है, उसे उसी की सहायता करने के लिए कहा जाएगा। वही एक सकारात्मक कार्य होगा।

17.2 हालाँकि, विकल्प में, जैसा कि उक्त धारा के स्पष्टीकरण I में प्रदान किया गया है, जो कोई भी जानबूझकर गलत प्रस्तुतीकरण करता है या किसी महत्वपूर्ण तथ्य को जानबूझकर छुपाता है, जिसका खुलासा करने के लिए वह बाध्य है, तो उसे उकसाना भी माना जाएगा। और इस प्रकार, उक्त प्रकृति का नकारात्मक कार्य भी दुष्प्रेरण के दायरे में आएगा।

18. इस न्यायालय का मानना है कि भारत में विवाह को विनियमित करने वाले स्वीय विधि के तहत, एक द्विविवाहित दूसरी शादी करने का अपराध आईपीसी की धारा 494 और 495 के दायरे में आता है।

18.1 हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 17 के अनुसार, यदि कोई व्यक्ति अधिनियम के तहत हिंदू माना जाता है और अपनी पहली शादी के अस्तित्व में किसी अन्य व्यक्ति से शादी करता है, तो आईपीसी की धारा 494 और 495 के तहत प्रावधान तदनुसार लागू होंगे।

18.2 इसी प्रकार, पारसी विवाह और विवाह विच्छेद अधिनियम, 1936 की धारा 5 के अनुसार, यदि उक्त अधिनियम के तहत पारसी माना जाने वाला कोई व्यक्ति, पहले पति या पत्नी के जीवनकाल के दौरान या पहले पति या पत्नी को कानूनी रूप से विवाह विच्छेद दिए बिना दूसरी शादी करता है, तो उसे आईपीसी की धारा 494 और 495 में निहित कानून के प्रावधानों के अधीन दोषी ठहराया जाएगा।

18.3 और, विशेष विवाह अधिनियम, 1954 की धारा 44 के अनुसार, यदि कोई व्यक्ति द्विविवाह का अपराध करता है तो वह/वे आईपीसी की धारा 494 और 495 के तहत दायरे में आएंगे।

18.4 और यद्यपि ईसाइयों और मुसलमानों के बीच विवाह और विवाह विच्छेद को विनियमित करने वाले कानून स्पष्ट रूप से आईपीसी की धारा 494 और 495 की प्रयोज्यता का उल्लेख नहीं करते हैं, उक्त धाराएं उन पर भी लागू होती हैं। **वेणुगोपाल के. बनाम भारत संघ (डब्ल्यू.पी. (सी) संख्या 4559/2015)** के

मामले में माननीय केरल उच्च न्यायालय द्वारा 23.02.2015 को दिया गया निर्णय, इस पर कानूनी स्थिति को स्पष्ट करता है।

उक्त निर्णय का प्रासंगिक भाग यहां निम्नानुसार पुन: प्रस्तुत किया गया है:-

"9. मुस्लिम स्वीय विधि में एक मुसलमान को एक साथ चार पत्नियाँ रखने की अनुमति दी गई है। कमला कुमारी बनाम मोहन लाल (II [1984] डीएमसी 279 (इलाहाबाद) मामले में इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा धारा 494 को इस आधार पर चुनौती दी गई थी कि यह अधिकारातीत है। अदालत के समक्ष यह तर्क दिया गया था कि धारा 494 के प्रावधान धर्म के आधार पर भेदभावपूर्ण हैं। यह तर्क दिया गया कि हालांकि मुस्लिम कानून के तहत एक व्यक्ति कई पत्नियां रख सकता है, जिन पर द्विविवाह के लिए मुकदमा नहीं चलाया जाएगा, लेकिन एक हिंदू जो दूसरी पत्नी लेता है, उस पर द्विविवाह के लिए मुकदमा चलाया जाता है, यह भेदभाव का एक स्पष्ट मामला है उपरोक्त तर्क को खारिज करते हुए, उच्च न्यायालय ने इस प्रकार टिप्पणी की:

"मुख्य बात यह है कि क्या वर्गीकरण किसी अच्छे और वास्तविक संबंध पर आधारित है या भेदभाव मनमाना है। संविधान में स्वीय विधियों में भी संशोधन का प्रावधान किया है। मैं संविधान में निहित समवर्ती सूची का उल्लेख कर सकता हूं। क्रम संख्या 5 पर विवाह और विवाह विच्छेद, शिशु और नाबालिग; दत्तक ग्रहण; वसीयत, निर्वसीयत और उत्तराधिकार; संयुक्त परिवार और याचिका सभी को समवर्ती सूची में शामिल किया गया है और भारत संघ के साथ-साथ राज्य दोनों को इन मामलों के संबंध में कोई भी कानून बनाने का अधिकार है। हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 17 एक विवाह के सिद्धांतों का परिचय देती है। उल्लेखनीय है कि संविधान की धारा 44 में प्रावधान है कि राज्य नागरिकों के लिए एक समान नागरिक संहिता सुनिश्चित करने का प्रयास करेगा। ईसाई, पारसी, यहूदी और नायर पहले से ही एकपत्नी थे। यदि एक विवाह का समान प्रावधान हिंदुओं के लिए भी किया गया है, तो कानून को उन व्यक्तियों

के वर्ग के लाभ के लिए माना जाएगा जिन पर हिंदू विवाह अधिनियम लागू होता है और यह तर्क कि यह वास्तव में उस वर्ग के खिलाफ निर्देशित है, भेदभाव करता है। खरा नहीं उतरता है।"

10. ऐसे मामले भी हो सकते हैं जहां किसी मुस्लिम पुरुष या महिला पर आईपीसी की धारा 494 के तहत भी अपराध के लिए मुकदमा चलाया गया हो। ऐसे मामले में जहां कोई मुस्लिम पुरुष पांचवीं पत्नी से शादी करता है, उस पर आईपीसी की धारा 494 के तहत मुकदमा चलाया जा सकता है क्योंकि 5वीं शादी अमान्य होगी, स्वीय विधि में केवल चार पत्नियों को एक साथ रखने की अनुमति है। इसी तरह दूसरी शादी करने वाली मुस्लिम महिला पर आईपीसी की धारा 494 के तहत अपराध के लिए कार्रवाई की जा सकती है। इस प्रकार अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता की यह दलील कि आईपीसी की धारा 494 के तहत अपराध हिंदू/मुस्लिम/ईसाई के बीच भेदभावपूर्ण है, स्वीकार्य नहीं है।

13. उपरोक्त चर्चा के मद्देनजर हमारा मानना है कि धारा 494 किसी भी जाति या पंथ के हिंदू/मुस्लिम/ईसाई पुरुष या महिला के अपराधी के बीच भेदभाव नहीं करती है और दंड संहिता, 1860 की धारा 494 के तहत कार्रवाई की जा सकती है। बशर्ते कि धारा 494 की सामग्री बनाई गई हो। इस प्रकार हमारा विचार है कि अपीलार्थी रिट याचिका में की गई प्रार्थना के अनुसार किसी भी राहत का पात्र नहीं है।

रिट याचिका खारिज की जाती है।"

19. यह कहा जा सकता है कि जहां समाज के खिलाफ अपराधों से सख्ती से निपटा जाना चाहिए, वहीं निजी प्रकृति के अपराधों, विशेष रूप से विवाह और परिवार की इकाई से जुड़े अपराधों से सख्ती से निपटना होगा। क्योंकि यह कानून की स्थापित स्थिति है कि वैवाहिक अपराध या परिवार की इकाई से संबंधित अपराध, हालांकि अभी भी दांडिक अपराध हैं, अदालतों द्वारा संवेदनशीलता के साथ और समाज के विरुद्ध अपराधों से पूरी तरह से अलग तरीके से निपटा जाना चाहिए।

20. *इस न्यायालय का मानना है कि सीआरपीसी की धारा 494 के तहत अपराध की प्रकृति जघन्य प्रकृति की नहीं है, न ही इसमें सामाजिक या मनोवैज्ञानिक पतन के अपराध के शारीरिक या मानसिक आयाम हैं। द्विविवाह में प्रवेश करने का अपराध गलती करने वाले पति या पत्नी की ओर से किया गया अपराध है जो पहले से ही शादीशुदा है, और यह किसी और के खिलाफ नहीं किया जा सकता* है। *पति/पत्नी के इतर अन्य व्यक्ति व्यक्तिगत पसंद के प्रयोग के दर्शक मात्र हैं, जो गलत और/या अवैध हो सकता है, लेकिन ऐसी त्रुटि और अवैधता के लिए केवल दोषी पति-पत्नी को ही जिम्मेदार ठहराया जा सकता है।*

21. यह न्यायालय यह भी गौर करता है कि **जोसेफ शाइन बनाम भारत संघ (रिट याचिका (आपराधिक) संख्या 194/2017)** के मामले में माननीय श्री न्यायमूर्ति रोहिंटन एफ. नरीमन की सहमति से माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा 27.09.2018 को दिए गए निर्णय में आईपीसी के तहत द्विविवाह के अपराध के संबंध में निम्नलिखित टिप्पणी की:-

> ***"यह देखा जाएगा कि द्विविवाह के अपराध की तुलना में व्यभिचार का अपराध केवल तीसरे पक्ष के पुरुष अपराधी को दंडित करता है, जो द्विविवाह करने वाले को दंडित करता है, चाहे वह पुरुष हो या महिला।"***

22. यद्यपि उपरोक्त टिप्पणी व्यभिचार के अपराध की तुलना में द्विविवाह के अपराध की रूपरेखा को समझने के लिए की गई थी, लेकिन बाद वाला केवल दोषी पति या पत्नी को दंडित करने में लिंग तटस्थ है; यह सीआरपीसी के प्रावधान 494 में निहित विधिक मंशा को परिपुष्ट करता है, क्योंकि द्विविवाह के अपराध के लिए दंड केवल गलती करने वाले पति या पत्नी के खिलाफ ही हो सकता है।

23. इस प्रकार द्विविवाह निजी प्रकृति का अपराध है, जो विवाह संस्था की पवित्रता को प्रभावित करता है, और दोषी पति/पत्नी पर आपराधिक आरोप लगाता है, हालाँकि यह नहीं कहा जा सकता है कि इसका विवाह से बाहर किसी भी व्यक्ति पर प्रभाव पड़ रहा है और अत: किसी भी अन्य व्यक्ति चाहे कोई भी हो, के विरुद्ध कोई भी आपराधिक दायित्व नहीं बनाया जा सकता है।

24. द्विविवाह में प्रवेश करने के कृत्य से पहली शादी की संस्था की पवित्रता पर गंभीर परिणाम हो सकते हैं, हालांकि साथ ही इस तरह के अपराध का बोझ पूरी तरह से पति/पत्नी के कंधों पर पड़ता है और अकेले और परिवार के व्यापक सदस्यों या अन्य लोगों को इसमें शामिल नहीं किया जा सकता।

25. *आईपीसी* की धारा 494 को अक्सर आईपीसी की धारा 498क के समान देखा जाता है, जबकि बारीकी से जांच करने पर, इसका एक अलग चरित्र होता है, क्योंकि आईपीसी की धारा 498क के तहत होने वाले अपराध के लिए, पत्नी आमतौर पर संयुक्त परिवार में परिवार के सदस्यों के साथ रहती है, जहां अपराध करने में परिवार के सदस्यों की प्रत्यक्ष और निर्विवाद भूमिका होती है। परिवार अपने कार्यों के माध्यम से, दहेज के लिए उत्पीड़न/मांग, और/या अन्य क्रूरताएं करके पत्नी या बहू के रूप में ही परिवार के सदस्यों में से किसी एक की के जीवन को खतरे में डाल सकता है। विभिन्न विधानों में परिवार के सदस्यों की प्रत्यक्ष भूमिका की परिकल्पना की गई है, जो न केवल प्रशंसनीय है, बल्कि गंभीर प्रभाव भी डाल सकती है।

26. इसके अलावा, कानून आईपीसी की धारा 498क से इस तरह से निपटता है जो आईपीसी की धारा 494 से बिल्कुल अलग है। आईपीसी की धारा 498क एक संज्ञेय और गैर-जमानती अपराध होने के बावजूद, इस तथ्य को देखते हुए कि यह परिवार की मूलभूत इकाई से संबंधित है, और यह तब लागू होती है जब रिश्ते किसी भी कारण से टूट जाते हैं और बिखर जाते हैं, न्यायशास्त्र यह सुनिश्चित करने के लिए विकसित किया गया है कि सभी हितधारक; संबंधित जांच अधिकारियों और न्यायालयों सहित, लेकिन इन्हीं तक सीमित नहीं, ऐसे मामलों को संवेदनशील और सावधानीपूर्वक तरीके से निपटाएं।

27. यह न्यायालय **अर्नेश कुमार बनाम बिहार राज्य और अन्य(दांडिक अपील संख्या 1277/2014)** के मामले में 02.07.2014 को माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय के प्रति भी सचेत है, जिसमें आईपीसी की धारा 498क दहेज निषेध अधिनियम, 1960 की धारा 4 के तहत वैवाहिक अपराध के आरोपी पति की अग्रिम जमानत से निपटने के दौरान, निम्नलिखित टिप्पणियां की गईं:-

"हाल के वर्षों में वैवाहिक विवादों में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। इस देश में विवाह संस्था का बहुत सम्मान किया जाता है। आईपीसी की धारा 498-क किसी महिला को उसके पति और उसके रिश्तेदारों के हाथों उत्पीड़न के खतरे से निपटने के घोषित उद्देश्य से पेश की गई थी। तथ्य यह है कि धारा 498-क एक संज्ञेय और गैर-जमानती अपराध है, जिसने इसे उन प्रावधानों के बीच गौरव का संदिग्ध स्थान दिया है, जिनका उपयोग असंतुष्ट पत्नियाँ ढाल के बजाय हथियार के रूप में करती हैं। परेशान करने का सबसे आसान तरीका है कि पति और उसके रिश्तेदारों को इस प्रावधान के तहत गिरफ्तार कर लिया जाए।

गिरफ़्तारी अपमान लाती है, आज़ादी कम कर देती है और हमेशा के लिए घाव बना देती है। कानून बनाने वाले भी इसे जानते हैं और पुलिस भी। कानून बनाने वालों और पुलिस के बीच लड़ाई चल रही है और ऐसा लगता है कि पुलिस ने सीआरपीसी में निहित और सन्निहित पाठ से सबक नहीं सीखा है; आजादी के छह दशकों के बावजूद यह अपनी औपनिवेशिक छवि से बाहर नहीं आ सकी है, इसे बड़े पैमाने पर उत्पीड़न, उत्पीड़न का एक उपकरण माना जाता है और निश्चित रूप से इसे जनता का मित्र नहीं माना जाता है। गिरफ्तारी की कठोर शक्ति का प्रयोग करने में सावधानी की आवश्यकता पर न्यायालयों द्वारा बार-बार जोर दिया गया है, लेकिन इसके वांछित परिणाम नहीं मिले हैं। गिरफ्तार करने की शक्ति इसके अहंकार में बहुत योगदान देती है और साथ ही इसे रोकने में मजिस्ट्रेट की विफलता में भी। इतना ही नहीं, गिरफ्तारी की शक्ति पुलिस भ्रष्टाचार के आकर्षक स्रोतों में से एक है। पहले गिरफ़्तारी फिर बाकियों पर कार्यवाही करने का रवैया घृणित है। यह उन पुलिस अधिकारियों के लिए एक उपयोगी उपकरण बन गया है जिनमें संवेदनशीलता की कमी है या जो परोक्ष उद्देश्य से कार्य करते हैं।

विधि आयोगों, पुलिस आयोगों और इस न्यायालय ने बड़ी संख्या में निर्णयों में गिरफ्तारी की शक्ति का प्रयोग करते समय व्यक्तिगत स्वतंत्रता और सामाजिक व्यवस्था के बीच संतुलन बनाए रखने की

आवश्यकता पर जोर दिया। पुलिस अधिकारी गिरफ़्तारी करते हैं क्योंकि उनका मानना है कि उनके पास ऐसा करने की शक्ति है। चूंकि गिरफ़्तारी आज़ादी को कम करती है, अपमान लाती है और हमेशा के लिए घाव दे देती है, इसलिए हम अलग तरह से महसूस करते हैं। हमारा मानना है कि कोई भी गिरफ्तारी केवल इसलिए नहीं की जानी चाहिए क्योंकि अपराध गैर-जमानती और संज्ञेय है और अतः, पुलिस अधिकारियों के लिए ऐसा करना वैध है। गिरफ्तार करने की शक्ति का अस्तित्व में होना एक बात है, इसके प्रयोग का औचित्य बिल्कुल दूसरी बात है। गिरफ्तारी की शक्ति के इतर, पुलिस अधिकारियों को इसके कारणों को उचित ठहराने में भी सक्षम होना चाहिए। किसी व्यक्ति के विरुद्ध किए गए अपराध के आरोप मात्र पर नियमित तरीके से कोई गिरफ्तारी नहीं की जा सकती।

किसी पुलिस अधिकारी के लिए यह विवेकपूर्ण और बुद्धिमानी होगी कि आरोप की वास्तविकता के बारे में कुछ जांच के बाद उचित संतुष्टि के बिना कोई गिरफ्तारी न की जाए। इस कानूनी स्थिति के बावजूद, विधान में कोई सुधार नहीं हुआ। गिरफ़्तारी की संख्या कम नहीं हुई है। अंततः संसद को हस्तक्षेप करना पड़ा और वर्ष 2001 में प्रस्तुत विधि आयोग की 177वीं रिपोर्ट की सिफ़ारिश पर दंड प्रक्रिया संहिता की (संक्षेप में 'सीआरपीसी) धारा 41 को वर्तमान स्वरूप में अधिनियमित किया गया। यह ध्यान रखना दिलचस्प है कि ऐसी सिफारिश विधि आयोग द्वारा काफी पहले वर्ष 1994 में प्रस्तुत अपनी 152वीं और 154वीं रिपोर्ट में की गई थी। आनुपातिकता का मूल्य गिरफ्तारी से संबंधित संशोधन में व्याप्त है। चूंकि वर्तमान अपील में हम जिस अपराध से संबंधित हैं, उसमें अधिकतम कारावास की सजा का प्रावधान है जिसे सात वर्ष तक बढ़ाया जा सकता है और जुर्माना लगाया जा सकता है, सीआरपीसी की धारा 41(1)(ख), जो इस उद्देश्य के लिए प्रासंगिक है, इस प्रकार है :

*"**41. पुलिस बिना वारंट के कब गिरफ्तार कर सकती है**.-(1) कोई भी पुलिस अधिकारी किसी मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना और वारंट के बिना किसी भी व्यक्ति को गिरफ्तार कर सकता है-*

(क) *x x x x x x*

(ख) *जिसके खिलाफ उचित शिकायत की गई है, या विश्वसनीय जानकारी प्राप्त हुई है, या जिसके विरूद्ध उचित संदेह मौजूद है कि उसने ऐसा संज्ञेय अपराध किया है, यदि निम्नलिखित शर्तें पूरी होती हैं तो उसमें सजा की अवधि जुर्माने के साथ अथवा बिना जुर्माने के सात वर्ष से कम हो सकती है या जिसे सात तक बढ़ाया जा सकता है। अर्थात्:-*

(i) *x x x x x*

(ii) यदि *पुलिस अधिकारी इस बात से संतुष्ट है कि ऐसी गिरफ्तारी आवश्यक है-*

(क) ऐसे व्यक्ति को कोई और अपराध करने से रोकने के लिए; या

(ख) अपराध की उचित जांच के लिए; या

(ग) ऐसे व्यक्ति को अपराध के साक्ष्य को गायब करने या ऐसे साक्ष्य के साथ किसी भी तरीके से छेड़छाड़ करने से रोकने के लिए; या

(घ) ऐसे किसी भी व्यक्ति को जो मामले के तथ्यों से परिचित हो, को कोई प्रलोभन, धमकी या वादा करने से रोकना ताकि उसे अदालत या पुलिस अधिकारी को ऐसे तथ्यों का खुलासा करने से रोका जा सके; या

(ङ) जब तक ऐसे व्यक्ति को गिरफ्तार नहीं किया जाता, जब भी आवश्यक हो, न्यायालय में उसकी उपस्थिति सुनिश्चित नहीं की जा सकती, और पुलिस अधिकारी ऐसी गिरफ्तारी करते समय अपने कारणों को लिखित रूप में दर्ज करेगा:

बशर्ते कि कोई पुलिस अधिकारी, उन सभी मामलों में जहां इस उपधारा के प्रावधानों के तहत किसी व्यक्ति की गिरफ्तारी की आवश्यकता नहीं है, गिरफ्तारी न करने के कारणों को लिखित रूप में दर्ज करेगा।

X x x x x x

उपरोक्त प्रावधान को महज पढ़ने से, यह स्पष्ट है कि सात वर्ष से कम

अवधि के कारावास या जुर्माने के साथ या बिना जुर्माने के सात वर्ष तक की सजा से दंडनीय अपराध के आरोपी व्यक्ति को केवल इस संतुष्टि पर पुलिस अधिकारी द्वारा गिरफ्तार नहीं किया जा सकता है कि ऐसे व्यक्ति ने उपरोक्तानुसार दंडनीय अपराध किया है। ऐसे मामलों में गिरफ्तारी से पहले पुलिस अधिकारी को इस बात से भी संतुष्ट होना पड़ता है कि ऐसे व्यक्ति को कोई और अपराध करने से रोकने के लिए; या मामले की उचित जांच के लिए; या अभियुक्त को अपराध के साक्ष्य गायब करने से रोकने के लिए; या ऐसे साक्ष्यों के साथ किसी भी तरह से छेड़छाड़ करने से रोकने के लिए; या ऐसे व्यक्ति को किसी गवाह को कोई प्रलोभन, धमकी या वादा करने से रोकने के लिए ताकि उसे अदालत या पुलिस अधिकारी के सामने ऐसे तथ्यों का खुलासा करने से रोका जा सके ऐसी गिरफतारी आवश्यक है; या जब तक ऐसे आरोपी व्यक्ति को गिरफ्तार नहीं किया जाता, जब भी आवश्यक हो, अदालत में उसकी उपस्थिति सुनिश्चित नहीं की जा सकती।

28. द्विविवाह के लिए उकसाने के अपराध को किसी व्यापक श्रेणी का अपराध नहीं कहा जा सकता क्योंकि अपराध की प्रकृति स्वयं सीधे और पूरी तरह से केवल पति-पत्नी के कंधों पर निर्भर करती है, और द्विविवाह करने के निर्णय को ऐसा नहीं कहा जा सकता है जिसे उकसाया/उत्तेजित/उकसाया हुआ निर्णय कहा जाए क्योंकि यह पहली शादी की पवित्रता को तोड़ने का कृत्य है।

29. द्विविवाह, जो केवल दो व्यक्तियों के बीच ही हो सकता है, के अपराध से निपटते समय दुष्प्रेरण के आवश्यक घटकों को पूरी तरह से अलग परिप्रेक्ष्य में देखा जाना चाहिए। **आईपीसी में इसका अद्वितीय स्थान है, क्योंकि भारतीय दंड संहिता, 1860 में लगभग सभी अपराध किन्हीं दो या दो से अधिक व्यक्तियों के बीच हो सकते हैं, जबकि द्विविवाह का अपराध केवल और केवल दो विशिष्ट व्यक्तियों पति-पत्नी अकेले के बीच हो सकता है; इस प्रकार द्विविवाह एक दुर्लभ अपराध है जो अन्य सभी व्यक्तियों को इसकी परिभाषा और ऐसा करने से दूर रखता है, और अत: यदि कोई चाहे भी, तो वह ऐसे तब तक द्विविवाह का अपराध नहीं कर सकता/सकती है, जब तक कि ऐसा व्यक्ति**

विवाह के भीतर पति या पत्नी न हो।

30. विवाह की पवित्रता द्विविवाह के अपराध का आहवान करती है जिसको सख्ती से देखने और निपटाने की आवश्यकता है, ऐसा तब भी जब समाज उदार हो रहा हो। और यदि इसे नागरिक गलती के रूप में बरकरार रखते हुए इसे अपराधमुक्त किया जाता है, तो यह एक उचित मामले में विचार के लिए आ सकता है।

31. आईपीसी के अध्याय V में निहित दुष्प्रेरण की पूरी योजना को देखने पर, और धारा 108 और यहां तक कि आईपीसी की धारा 109, 110, 111,112, 113, 114, 115 और 116 के तहत 'दुष्प्रेरक' की परिभाषा को देखने पर, इस न्यायालय की स्पष्ट राय है कि अपराध के रूप में उकसाना उन अपराधों को करने के लिए अभिप्रेत और निर्धारित है, जहां अपराध के व्यापक आयाम की परिकल्पना की गई है। जबकि द्विविवाह पति-पत्नी के बीच सख्ती से लागू होता है, लेकिन उकसावे का प्रवर्तन संभव नहीं हो सकता है।

32. द्विविवाह की तुलना में दुष्प्रेरण के आवश्यक घटकों से इस प्रकार निपटा जाता है कि उकसाने का पहला घटक होने का अर्थ है कि किसी व्यक्ति को दुष्प्रेरण में सक्रिय भूमिका निभानी होती है, और जब कोई पति या पत्नी किसी भी कारण से मौजूदा विवाह से बाहर निकलने, और दूसरे में प्रवेश करने का निर्णय लेते हैं, यह पूरी तरह से एक व्यक्तिगत निर्णय है, जिस पर केवल द्विविवाह करने वालों के खिलाफ आपराधिक दंडात्मक प्रावधान बनते हैं।

32.1 दुष्प्रेरण के दूसरे घटक के संबंध में, इस न्यायालय का मानना है कि हालांकि साजिश समाज के खिलाफ अपराध करने के लिए एक वैध आधार हो सकती है, लेकिन द्विविवाह के अपराध को समाज के खिलाफ अपराध नहीं कहा जा सकता क्योंकि यह अकेले गलती करने वाले पति-पत्नी के खिलाफ है। यह ऐसा कोई अपराध नहीं है जो बड़े पैमाने पर समाज के खिलाफ किया जा सकता है, न ही इसका समाज पर कोई बड़ा प्रभाव हो सकता है क्योंकि इसका प्रभाव केवल जीवनसाथी और विवाह पर पड़ता है।

32.2 इस न्यायालय ने दुष्प्रेरण के तीसरे घटक पर सावधानीपूर्वक विचार किया है और

पाया है कि विशेष रूप से द्विविवाह के अपराध में, किसी भी सहायता का कोई महत्व नहीं हो सकता है क्योंकि सहायता विवाह के लिए नहीं है बल्कि विवाह समारोह को सुविधाजनक बनाने के लिए है। चाहे वे लगे हुए व्यक्ति; बैंड-बाजे बजाने के लिए हों, धार्मिक पुजारी के रूप में समारोह आयोजित करने के लिए हों, कैटरर्स के रूप में हों, गार्ड के रूप में, डेकोरेटर के रूप में, इवेंट प्लानर के रूप में, फोटोग्राफर के रूप में, वगैरह-वगैरह, या निकट या दूर के रिश्तेदार हों, ऐसे सभी व्यक्तियों को पहली शादी की सूचना हो सकती है और वे दूसरी शादी के समारोह में भाग ले सकते हैं, फिर भी यह नहीं कहा जा सकता है कि वे जानबूझकर द्विविवाह में सहायता करने के क्षेत्र में आते हैं।

32.3 इस संबंध में कि क्या कोई व्यक्ति किसी व्यक्ति के पिछले विवाह के निर्वाह के तथ्य का खुलासा करने के लिए बाध्य होगा, यह न्यायालय यह स्वीकार करने में असमर्थ है कि ऐसा कर्तव्य पति या पत्नी के अलावा किसी अन्य पर लगाया जा सकता है। इस तरह के निष्कर्ष पर पहुंचने पर, इस न्यायालय ने पाया कि यदि द्विविवाहवादी, पुरुष या महिला, दूसरे को धोखा देना चाहता है और द्विविवाह विवाह करना चाहता है, तो वह इस तथ्य को छिपाने के लिए अपनी शक्ति के भीतर सब कुछ करेगा अर्थात या तो इस तरह के समारोह को गुप्त रूप से करके, या अपने करीबी लोगों को चुप रहने के लिए तैयार करके। इस प्रकार, भले ही व्यक्ति पूर्व विवाह के अस्तित्व के ज्ञान के साथ, कार्य या मात्र उपस्थिति से, द्विविवाह में भाग लेते हैं, यह नहीं कहा जा सकता है कि वे इसे बढ़ावा दे रहे हैं।

33. इसके अलावा, यह न्यायालय यह विश्लेषण करने में सीआरपीसी की धारा 43 में निहित कानून के प्रावधान में विधायी इरादे को भी ध्यान में रखती है कि क्या ऐसा व्यक्ति जो द्विविवाह करने वाले चूककर्ता पति पत्नी से इतर है, ऐसा द्विविवाह करने वाले व्यक्ति के पूर्व विवाह के तथ्यों को प्रकट करने के लिए उत्तरदायी होगी।

संक्षिप्तता के लिए, उक्त धारा को निम्नानुसार पुन: प्रस्तुत किया गया है: -

43. *निजी व्यक्ति द्वारा गिरफ्तारी और ऐसी गिरफ्तारी पर प्रक्रिया.-*

(1) ***<u>कोई भी निजी व्यक्ति किसी ऐसे व्यक्ति को, जो उसकी उपस्थिति में गैर-जमानती और संज्ञेय अपराध करता है, या किसी उद्घोषित अपराधी को गिरफ्तार कर सकता है</u>*** *या गिरफ्तार करवा सकता है, और, अनावश्यक देरी के बिना, इस प्रकार गिरफतार किए गए व्यक्ति को पुलिस अधिकारी को सौंप देगा या सुपुर्द कर देगा या, किसी पुलिस अधिकारी की अनुपस्थिति में, ऐसे व्यक्ति को निकटतम पुलिस स्टेशन में ले जाएगा या हिरासत में ले जाएगा।*

(2) यदि यह विश्वास करने का कारण है कि ऐसा व्यक्ति धारा 41 के प्रावधानों के तहत आता है, तो एक पुलिस अधिकारी उसे फिर से गिरफ्तार करेगा।

(3) यदि यह मानने का कारण है कि उसने कोई गैर-संज्ञेय अपराध किया है, और वह किसी पुलिस अधिकारी के अपना नाम और निवास बताने की मांग पर इनकार कर देता है, या कोई ऐसा नाम या निवास बताता है जिस पर ऐसे अधिकारी के पास विश्वास करने का कारण हो झूठा हो, तो उस पर धारा 42 के प्रावधानों के तहत कार्रवाई की जाएगी; लेकिन अगर यह मानने का पर्याप्त कारण नहीं है कि उसने कोई अपराध किया है, तो उसे तुरंत रिहा कर दिया जाएगा।

33.1 अत: यह न्यायालय मानता है कि भले ही कोई निजी व्यक्ति संज्ञेय अपराध के समय उपस्थित हो, सीआरपीसी की धारा 43 में निहित कानून की भाषा में कहा गया है कि कोई निजी व्यक्ति 'गिरफ्तार' कर सकता है या गिरफ्तार करवा सकता है, और जबकि माननीय उच्चतम न्यायालय के कई निर्णय हैं जो इस आशय की बात करते हैं कि कुछ परिस्थितियों में 'हो सकता है' शब्द को 'करेगा' संदर्भ में पढ़ा जाएगा और कानून की संबंधित धारा के अनुपालन का अनिवार्य कर्तव्य लगाएगा, ऐसी व्याख्या को ऐसे कानून के पीछे के उद्देश्य को पूरा करना होगा, और इसे ऐसे संदर्भ में देखा जाना चाहिए। वर्तमान अपराध एक गैर संज्ञेय अपराध है, जो द्विविवाह के अपराध को इसके दायरे से बाहर

रखता है क्योंकि द्विविवाह न तो गैर-जमानती है और न ही गैर-संज्ञेय अपराध है। इस प्रकार, पुलिस को ऐसी जानकारी उपलब्ध कराने के लिए किसी भी व्यक्ति पर कानूनन कोई कर्तव्य नहीं लगाया गया है।

33.2 **श्रीमती बच्चन देवी एवं अन्य वि. नगर निगम, गोरखपुर एवं अन्य (अपील (सिविल) 992/2018)** के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिनांक 05.02.2018 को दिए गए निर्णय में निम्नलिखित टिप्पणियाँ की गईं:-

> *"11. जिस नाजुक प्रश्न की जांच की जानी बाकी है वह यह है कि कानून में स्थिति क्या है जब दोनों अभिव्यक्ति "करेंगे" और "हो सकता है" का उपयोग एक ही प्रावधान में किया जाता है।*
>
> *12. केवल 'हो सकता है' या 'करेगा' शब्द का प्रयोग निर्णायक नहीं है। यह प्रश्न कि क्या किसी क़ानून का कोई विशेष प्रावधान निर्देशिका है या अनिवार्य है, को सार्वभौमिक अनुप्रयोग के किसी सामान्य नियम को निर्धारित करके हल नहीं किया जा सकता है। इस तरह के विवाद का निर्णय विधायिका की मंशा का पता लगाकर किया जाना चाहिए, न कि उस भाषा को देखकर जिसमें प्रावधान को शामिल किया गया है। और विधायी इरादे का पता लगाने के लिए, न्यायालय को अधिनियम की योजना, प्रावधान के अंतर्निहित उद्देश्य और वस्तु, प्रावधान को एक या दूसरे तरीके से पढ़ने पर उत्पन्न होने वाले परिणाम या असुविधा होने की संभावना और कई अन्य प्रासंगिक विचारों की जांच करनी चाहिए।"*

33.3 जबकि पहली नज़र में, यह माना जा सकता है कि किसा निजी व्यक्ति को ऐसे व्यक्ति को गिरफ्तार करना चाहिए या गिरफ्तार करवाना चाहिए जो उसकी उपस्थिति में संज्ञेय अपराध करता है, लेकिन इसे अनिवार्य/बाध्यकारी नहीं कहा जा सकता है। यह किसी संज्ञेय अपराध के घटित होते देख रहे ऐसे व्यक्ति के विवेक पर निर्भर करेगा कि क्या उनके लिए ऐसे व्यक्ति को गिरफ़्तार करना या गिरफ़्तार करवाना उचित और संभव होगा, यह कहना सभी स्थितियों में संभव नहीं होगा, कि व्यक्तियों को कार्रवाई करनी चाहिए, क्योंकि यह उनकी अपनी सुरक्षा, भलाई या अन्यथा का प्रश्न हो सकता है। और अतः, किसी

व्यक्ति पर उसकी उपस्थिति में किए गए संज्ञेय अपराध के बारे में अनिवार्य रूप से रिपोर्ट करने का कोई दायित्व नहीं डाला जा सकता है।

33.4 अतः, इस न्यायालय की स्पष्ट राय है कि किसी संज्ञेय अपराध के घटित होने की गवाही देते समय भी, कानून किसी तीसरे व्यक्ति पर इसकी रिपोर्ट करने के लिए अनिवार्य और कानूनी कर्तव्य नहीं लगा सकता है, लेकिन यदि दी गई परिस्थितियों में ऐसे तीसरे व्यक्ति की ओर से कार्रवाई करना उसकी अपनी समझ के भीतर संभव है, इसके लिए प्रक्रिया प्रदान करता है।

34. वर्तमान मामले में, द्विविवाह का अपराध एक गैर-संज्ञेय अपराध है। जबकि सीआरपीसी कि धारा 43 के तहत तीसरे व्यक्ति द्वारा किसी संज्ञेय अपराध के घटित होने पर गवाही देना ऐसे व्यक्ति के लिए अनिवार्य नहीं है, अत: यह कहना अन्यायपूर्ण और अनुचित होगा कि किसी भी व्यक्ति को किसी द्विविवाह के पिछले विवाह के तथ्य के बारे में पता है, उसे ऐसा खुलासा करना चाहिए। और अतः, यह उकसावे के दायरे में नहीं आएगा और न ही आ सकता है।

35. इस न्यायालय की दृढ़ राय है कि बदलते समय में, वैवाहिक अपराधों के संबंध में दोषी होने के आयामों पर फिर से विचार किया जाना चाहिए, अन्यथा, यह विवाह संस्था को मजबूत करने के बजाय और अधिक बाधाएं और कमजोरी पैदा करेगा।

36. इस तरह के दंडात्मक प्रावधान की शुरूआत के साथ कानून का लक्ष्य विवाह की संस्था को मजबूत करना है, साथ ही इससे संबंधित आपराधिक गतिविधि, जो कि अकेले द्विविवाह के खिलाफ एक वैवाहिक गलती है, की परिभाषा तैयार करना है।

37. पुनरावृत्ति की कीमत पर, इस न्यायालय ने पाया कि द्विविवाह का दायरा संकीर्ण है और केवल गलती करने वाले पति-पत्नी तक ही सीमित है। इसका विस्तार नहीं किया जा सकता या यह नहीं कहा जा सकता कि उकसावे के माध्यम से इसका व्यापक अर्थ हो सकता है।

38. यह तथ्य कि द्विविवाह एक शमन योग्य, जमानती और गैर संज्ञेय अपराध है,

अपने आप में ऐसे अपराध की अजीब प्रकृति को प्रकट करता है, जिसमें सात वर्ष तक की कैद और जुर्माना लगाने का प्रावधान है।

39. इस न्यायालय की राय है कि वर्तमान मामले में भी प्रथम दृष्टया द्विविवाह के अपराध का विस्तार न केवल अनियंत्रित और अनुचित परिस्थितियों को जन्म देगा, बल्कि गलती करने वाले व्यक्तियों के परिवारों में भी संकट की स्थिति पैदा करेगा। और अत:, गलती करने वाले पति/पत्नी के इतर किसी अन्य व्यक्ति पर आपराधिक दोष नहीं लगाया जा सकता है।

39.1 **जोसेफ शाइन (सुप्रा.)** के मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने माना कि व्यभिचार और द्विविवाह के अपराधों के बीच अंतर यह है कि जहां व्यभिचार एक तीसरे पक्ष से जुड़ा अपराध है, वहीं द्विविवाह का अपराध केवल पति-पत्नी के बीच का अपराध है, और अत: यह विवाह के दायरे में है। इस प्रकार यह स्पष्ट करता है कि द्विविवाह का अपराध केवल द्विविवाहवादी पति या पत्नी की सीमा तक ही कायम रखा जा सकता है, किसी अन्य तीसरे पक्ष के विरुद्ध नहीं।

40. जबकि इस न्यायालय की स्पष्ट राय है कि द्विविवाह करने वाले व्यक्ति पर, चाहे वह पुरुष हो या महिला आईपीसी की धारा 494 में निहित कानून के प्रावधानों के अनुसार सख्ती से कार्रवाई की जानी चाहिए, यह इस प्रस्ताव को स्वीकार करने में असमर्थ है कि कोई व्यक्ति द्विविवाह का अपराध करने के लिए अपराध को उकसा सकता है।

41. इस प्रकार, इस न्यायालय का मानना है कि आईपीसी की धारा 494 के तहत अपराध द्विविवाह करने वाले पति या पत्नी के खिलाफ लागू रहेगा, लेकिन द्विविवाह के लिए उकसाने का अपराध किसी पर भी लागू नहीं हो सकता है, चाहे वह परिवार के सदस्य हों या बड़े पैमाने पर समाज के सदस्य, ऐसे अपराध के लिए वे पति और/या पत्नी से आगे नहीं बढ़ सकते।

42. उपरोक्त चर्चा के परिणामस्वरूप, वर्तमान याचिका स्वीकार की जाती है। दिनांक 06.04.2017 और 31.03.2022 के आक्षेपित आदेश तदनुसार रद्द किये जाते हैं और अलग रखे जाते हैं। सभी लंबित आवेदनों का निपटारा कर दिया गया है।

(डॉ.पुष्पेन्द्र सिंह भाटी), न्यायमूर्ति

91-SKant/-

टिप्पणी: इस निर्णय का हिन्दी अनुवाद निविदा फर्म **राजभाषा सेवा संस्थान** द्वारा किया गया है, जिसे फर्म के निदेशक डॉ. वी. के. अग्रवाल**,** द्वारा मान्य और सत्यापित किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन व कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।